ऋग्वेद | ओ३म् | यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

वर्ष : 34 | आशाढ़-श्रावण | वि०स० 2079 | अंक : 7 | जुलाई 2022

मुद्रकः सरस्वती प्रेस, देहरादून | वजनः 50 ग्राम

श्रीमद् दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरूकुल पौंधा के स्थापना दिवस दिनांक 5 जून 2022 को लिया गया चित्र

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद | अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

karix
connect • interact

Transforming the way businesses communicate & interact with their customers

Karix empowers organisations to enable smarter, relevant, and personalised conversations with their customers and create seamless customer experiences, across the globe. Purpose-built for enterprises, Karix offers a rich suite of communication channels with superior security standards, unmatched customer support and a reliable cloud-based platform to support all communication needs.

21+
years of industry experience with a stronghold in all major industries

2,000+
Enterprise customers

100+ BN
Omni-channel messages processed annually

24x7
Support provided by over 200 engineers

10,000+
Business processes supported

CUSTOMER ENGAGEMENT SOLUTIONS SUITE

- WhatsApp
- A2P Messaging
- Email
- RCS
- Voice
- Marketing Automation
- Campaign Automation
- Chatbots
- Live Agent Chat

WHY DO FORTUNE 1000 BUSINESSES PREFER KARIX?

- Best in class connectivity
- High available systems
- Hybrid cloud infrastructure
- Deep domain understanding

For more details, visit us at www.karix.com or write to us at marketing@karix.com

ओ३म्

पवमान

वर्ष–34 अंक–7

आशाढ़–श्रावण 2079 विक्रमी जुलाई 2022

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,123 दयानन्दाब्द : 198

★

–: संरक्षक :–

स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

मो. : 9410102568

★

–: अध्यक्ष :–

श्री विजय कुमार

मो. : 9837444469

★

–: सचिव :–

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 9336225967

★

–: सहायक सम्पादक :–

अवैतनिक

मनमोहन कुमार आर्य–

मो. : 9412985121

★

–: कार्यालय :–

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून–248008

दूरभाष : 0135–2787001

मोबाईल : 7895978734 (श्री चन्दन सिंह)

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ. कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ. रामनाथ वेदालंकार	3
मनुष्य जीवन	डा. कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	4
वेदों का आविर्भाव कब, कैसे व क्यों हुआ ?	मनमोहन कुमार आर्य	7
ईश्वरोपासना अर्थात् सन्ध्या क्यों करें	मनमोहन कुमार आर्य	10
मृत्यु का स्वरुप क्या है–वैदिक वैज्ञानिक सार	पं उम्मेद सिंह विशारद	13
आचार्य अपने आचरण से छात्रों को सदाचरण...	मनमोहन कुमार आर्य	16
गुरुकुल, वेद एवं संस्कृत का महत्व	मनमोहन कुमार आर्य	17
'कर्म भोग फल' जीव हत्या का परिणाम	डॉ. डी. के. गर्ग	18
कुछ महत्वपूर्ण द्रव पदार्थ व उनके गुण	आचार्य बालकृष्ण	19
स्वर्ग और नरक	स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक	24
'पारस्परिक अभिवादन': विश्लेषण	डॉ. डी. के. गर्ग	25
आर्य समाज के आज के गौरव		28

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. "वैदिक साधन आश्रम"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. "पवमान"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
3. 'तपोवन विद्या निकेतन"	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1. कलर्ड फुल पेज — रु. 5000/– प्रति माह
2. ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज — रु. 2000/– प्रति माह
3. ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज — रु. 1000/– प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1. वार्षिक मूल्य — रु. 200/– वार्षिक
2. 15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य — रु. 2000/–

नोट: पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

वेद के आलोक में-सर्वे भवन्तु सुखिनः

आजकल हम अनेक विद्वानों के मुख से एक श्लोक सुनते हैं-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दु:खभाग् भवेत्।।

उपरोक्त श्लोक का अर्थ है- सभी सुखी होवें, सभी रोगमुक्त रहें, सभी मंगलमय के साक्षी बनें और किसी को भी दु:ख का भागी न बनना पड़े। इस श्लोक का मूल स्थान न वेद में और न ही यह किसी उपनिषद् में पाया जाता है। तथाकथित विद्वान् यह श्लोक उपनिषद में उपलब्ध होना बताते हैं। इन पंक्तियों के लेखक की जानकारी के अनुसार यह श्लोक बौद्ध धर्म के किसी ग्रन्थ से उद्धृत किया गया हे। कुछ लोग इसे लोकक्षेम मंत्र या सम्पूर्ण विश्व के कल्याण का मंत्र कहते हैं और कहते हैं कि इस मंत्र का 108 बार जाप करना चाहिए। यह मन्त्र नहीं है, क्योंकि मन्त्र वेद का भाग होता है और यह श्लोक किसी वेद में न पाये जाने के कारण मन्त्र नहीं है। दूसरे इसमें सभी के लिए सुखी होने, रोगमुक्त रहने और मंगलमय जीवन की कामना की की गई है, जो वेद की भावना के प्रतिकूल है। वेद में अनेक मन्त्रों के माध्यम से दस्यु अकर्मा, डाकू, चोर, नास्तिक और यज्ञ के ध्वंसकों का समूल नाश करने का आदेश है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने एक मन्त्र (ऋ0-01-04-14-04) आर्याभिविनय में उल्लिखित किया है-

वि जानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्।
शाकी भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन॥ (ऋ० ०१-४-१०-०३)

मन्त्र का अर्थ इस प्रकार है- हे सर्वज्ञ प्रभो! आप (आर्यान्) आर्यों को विद्याधर्मादि उत्तम प्राचार वाले मनुष्यों को (च) और (ये) जो (दस्यव:) दस्यु, अकर्मा, डाकू, चोर, नास्तिक, अनार्य हैं, उनको (विजानीहि) विशेषरूप से जानते हो। (वर्हिष्मते) यज्ञानुष्ठान करने वाले के लिये (अव्रतान्) व्रतरहितों, धर्मानुष्ठान रहितों को (शासद्) शिक्षा करते हुए (रन्धय) सीधा करो। प्रभो! पाप उत्तम कर्मों में (यजमानस्य) यजमान के (शाकी) शक्तिदाता और (चोदिता) प्रेरक (भव) हो। मैं (ते) आपके (ता) उन (विश्वा. इत्) सभी (सधमादेषु) समान आनन्द साधनों में (चाकन) कामना करता हूं। केवल उपरोक्त मन्त्र में ही नहीं अपितु वेद के अनेक मन्त्रों में दुर्जनों और समाज के विरुद्ध अपराध करने वालों के विरुद्ध दण्डात्मक कार्यवाही किये जाने के आदेश मिलते हैं। इनकी मंगल कामना करने की बात तो कहीं नही की गई है, अपितु इन्हें क्षमा भी नहीं किया जा सकता है। बौद्ध धर्म के इस श्लोक और जैनधर्म की क्षमावाणी का प्रभाव हिन्दूधर्म और संस्कृति पर भी पड़ा है, जिसके फलस्वरूप पृथ्वीराज ने गौरी को सत्रहबार क्षमा प्रदान की और अठारवीं बार उसे पराजय का सामना करना पड़ा। आर्यसमाज के सत्सगों व धार्मिक आयोजनों में प्रयोग किये जाने वाले सत्संग गुटका नामक पुस्तकों में भी यह श्लोक प्रकाशित होता है और हवन के बाद इस श्लोक का पाठ भी किया जाता है जो वैदिक मान्यता के सर्वथा प्रतिकूल है। अत: मेरी सभी आर्यजनों से यह प्रार्थना है कि इसे पुस्तकों में प्रकाशित न करें और आर्यजन इसका पाठ न करें। यदि पाठ करना आवश्यक ही समझें तो इस श्लोक को निम्न प्रकार संशोधित करते हुए प्रकाशित किया जाना उचित होगा।

सर्वे सज्जना: भवन्तु सुखिन: ते सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दु:खभाग् भवेत्।।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

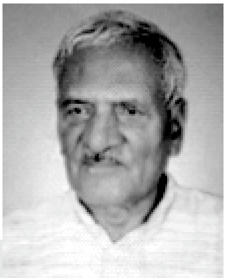

वेदामृत

'मैं तो प्रभु से प्रशंसा पाने का भूखा हूँ'

त्वमंग प्र शंसिषो, देवः शविष्ठ मर्त्यम्।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः।। ऋग्वेद 1.84.19

ऋषिः गोतमः राहूगणः। देवता इन्द्रः। छन्दः पथ्या बृहती।

डॉ0 रामनाथ वेदालंकार
की पुस्तक वेद-मंजरी से साभार

(अंग) हे प्रिय (शविष्ठ) सबसे अधिक बली (इन्द्र) परमात्मन्! (देवः) दानी, प्रकाशमान और प्रकाशक (त्वं) तू (मर्त्यं) मनुष्य की (प्र शंसिषः) प्रशंसा कर, [उसे साधुवाद दे]। (मघवन्) हे ऐश्वर्यशालिन्! (त्वत्) तुझसे अतिरिक्त (अन्यः) अन्य (मर्डिता) सुखदाता (न) नहीं [है], (ते) तेरे लिए (वचः) प्रार्थना–वचन (ब्रवीमि) बोल रहा हूं।

मनुष्य जब कोई प्रशंसा योग्य कार्य करता है, तब वह चाहता है कि उसे प्रोत्साहन मिले, साधुवाद प्राप्त हो, उसकी प्रशंसा में दो शब्द कहे जायें। पर प्रशंसा कौन करे? सांसारिक लोग तो डाह करते हैं कि अमुक शुभ कर्म करने का श्रेय अमुक को क्यों मिल रहा है। वे यदि साधुवाद देते भी हैं तो ऊपरी मन से देते हैं, या साधुवाद देने में भी उनका कुछ स्वार्थ निहित रहता है। अन्य कुछ वे न भी चाहें, तो भी इतना तो चाहते ही हैं कि जिसे हम बधाई या साधुवाद आदि देते हैं, उस पर मानो अहसान का भार लादते हैं, जो ग्रहीता को महंगा ही पड़ता है। अतः मुझे सांसारिक जनों के साधुवाद की कोई लालसा नहीं रही है। मैं तो चाहता हूं कि जब भी मुझसे महान् सत्कार्य बन पड़े, तब मुझे इन्द्र–प्रभु का आशीर्वाद और साधुवाद प्राप्त हो, मेरे अन्तःकरण में बैठा हुआ प्रभु उस कार्य के लिए प्रशंसा–वचन बोलता हुआ मुझे प्रोत्साहित करे, जिससे भविष्य में मैं और भी अधिक शुभ कार्यों में प्रवृत्त होऊं। प्रभु का आशीर्वाद सच्चा आशीर्वाद है, जो बिना प्रतिफल की आशा से दिया जाता है, जिसमें निश्छल प्रेम के अतिरिक्त किसी प्रकार का स्वार्थ, अहंकार या अहसान का भाव मिश्रित नहीं रहता। इन्द्र–प्रभु 'देव' हैं, सबसे बड़े दानी और स्वयं सद्गुणों से प्रकाशमान तथा अन्यों को प्रकाशित करनेवाले हैं। वे 'शविष्ठ' हैं, सबसे अधिक बलवान् हैं, अतएव सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के सम्राट् हैं। वे 'मर्डिता' हैं, शरणागत पर सुख की वर्षा करके उसे निहाल कर देनेवाले हैं। उनसे बढ़कर अन्य कोई सुखदाता नहीं है। सुखदाता होने का अभिमान करनेवाले सैकड़ों हैं, पर उनका दिया सुख सच्चा सुख नहीं होता, बल्कि कभी–कभी तो वह किसी बड़ी विपदा का कारण बन जाता है। प्रभु के सुख के आगे सांसारिक जनों के दिये हुए सुख निःसार हैं, तुच्छ हैं।

हे इन्द्र देव! हे बलियो में बली! हे विश्व–सम्राट्! तुम्ही मेरे प्रशंसक बनो, तुम्हीं मेरे 'मर्डिता' बनो। अन्य सबको छोड़कर तुम्हारे ही सम्मुख मैं स्तुति–वचनों ओर प्रार्थना–वचनों को बोल रहा हूं। तुम्हीं मुझे आशीष दो, तुम्हीं मुझे सत्पथ पर अग्रसर करो। मैं आज से सर्वात्मना तुम्हारा हूं।

सर्व श्री दीप चन्द, विजय कुमार
दीप कोल्ड स्टोर, दीप मार्बल स्टोर
कीरतपुर, जिला बिजनौर (उ.प्र.)

मनुष्य जीवन

–डॉ० कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुसार जो विचार किये बिना किसी काम को न करे उसका नाम मनुष्य है। समस्त जलचर, नभचर और थलचर प्राणी भोग चक्र में घूमते रहते हैं। जीव जन्म लेते हैं और कुछ समय पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। महर्षि मनुष्यता का लक्षण यह बताते हैं ˎ जितने मनुष्यता से भिन्न जातिस्थ प्राणी हैं उनमें दो प्रकार का स्वभाव है. बलवान् से डरना और निर्बल को डराना और दूसरे के प्राण तक निकाल करके अपना मतलब साध लेना। निर्बलों पर दया, उनका उपकार और रक्षा करना मनुष्य जाति का निज गुण है। यह आवश्यक नहीं है कि हमें सदैव मनुष्य के रूप में ही जन्म मिले। सभी आत्माएं अपने कर्मानुसार ही विभिन्न योनियों में जाते हैं। सभी वैदिक ग्रन्थों और विभिन्न ऋषियों की मान्यता के अनुसार जीवों को विभिन्न शरीरों में जन्म उनके पूर्व जन्म के कर्मा के आधार पर मिलता है। इस प्रकार मनुष्य जीवन मिलना अत्यन्त दुर्लभ है।

गोस्वामी तुल्सीदास ने भी कहा है.

बड़े भाग मानुस तन पावा।
सुर दुर्लभ सद्ग्रन्थहिं गावा।।

चाण्यक्य नीति में कहा गया है.

पुनर्वित्तं पुनर्मित्रं पुनर्भार्या पुनर्मही।
एतत्सर्वं पुनर्लभ्यं न शरीरं पुनः पुनः।।

अर्थात् नष्ट या खर्च हुआ धन फिर से प्राप्त हो जाता है, रूठा हुआ और बिछड़ा हुआ मित्र पुनः मिल जाता है या नये मित्र मिल जाते हैं, पत्नी का विछोह, परित्याग या देहावसान हो जाने पर दूसरी पत्नी मिल जाती है। जमीन, जायदाद, राज्य या देश ये भी फिर से मिल जाते हैं परन्तु मनुष्य शरीर बार–बार नहीं मिलता। मनुष्य जीवन तो हमें अपने पूर्व जन्म के सुकर्मों के कारण मिला है। अब हमारा यह कर्तव्य है कि हम आगे उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हों। यह देखा जाता है कि आजकल बहुत से व्यक्ति गांजा, चरस, शराब, ड्रग्स आदि का सेवन करने के बाद मनुष्य का शरीर पाकर भी अपने दुर्गुणों और हीन कर्मा के कारण गन्दी नालियों में लिपटे रहते हैं। वे नही जानते कि मनुष्य जीवन प्राप्त करना और इस शरीर को धारण करना कितना दुर्लभ कार्य है। अथर्ववेद के एक मन्त्र में कहा गया है. **अष्टा चक्रा नव द्वारा देवानां पूरयोध्याष्** अर्थात् यह शरीर एक अयोध्या नगरी हए जिसको कोई पराजित नहीं कर सकता है। इसमें आठ चक्र और नौ द्वार हैं। यह शरीर ईश्वर का मन्दिर है। इसमें देवता निवास करते है। हम देखते हैं कि मानव शरीर अद्भुत शक्तियों का भण्डार है। मनुष्य को छोड़ कर अन्य सभी योनियां केवल भोग योनि हैं, केवल मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जिसे भोग के साथ योग योनि मिली है। उसे कर्म करने की स्वतन्त्रता प्राप्त है जिससे वह आध्यात्मिक मार्ग पर उन्नति करते हुए बार.बार के जीवन–मरण के चक्कर से छुटकारा पाकर मोक्ष प्राप्त कर सकता है। मनुष्य जीवन तो मिल गया, अब उसे तदनुकूल आचरण भी अपनाने होंगे। महषि ने यजुर्वेद का भाष्य करते

हुए मनुष्य के गुणों और अनुकरणीय आचरणों का उल्लेख किया है। कुछ का संक्षेप में वर्णन इस प्रकार है.

1. मनुष्यों को सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग कर देना चाहिए। ऐसा करने में कोई निन्दा और स्तुति करे तो भी सत्य को कभी न छोड़े और मिथ्या को ग्रहण न करे। यही मनुष्यों के लिए विशेष गुण है।
2. सत्यवादी, शास्त्रवेत्ता, सज्जन, विद्वान् जो चाहे वही चाहना मनुष्यों को भी करनी चाहिए। किसी को किन्हीं विद्वानों का अनादर न करना चाहिए तथा स्त्री पुरुषों को ब्रह्मचर्यत्याग, अयोग्य आहार.विहार, व्यभिचार, अत्यन्त विषयासक्ति आदि खोटे कामों से आयुर्दा का नाश कभी न करना चाहिए।
3. जैसे शास्त्रवेत्ता विद्वान् जन दोषों को खोके धर्म आदि अच्छे गुणों को ग्रहण कर ब्रह्म को प्राप्त होके आनन्दयुक्त होते हैं, वैसे उनको पाकर मनुष्यों को भी सुखी होना चाहिए।

शास्त्रों में मनुष्यों के कर्तव्यों का भी अनेकों स्थानों पर उल्लेख मिलता है। महर्षि ने वेदों के अमृत को हमारे लिए प्रदान करते हुए कुछ कर्तव्य बताए हैं जो संक्षिप्त रूप में निम्न प्रकार हैं—

1. **पदार्थ विद्या की प्राप्तिः**. मनुष्यों को चाहिए कि सदैव ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, उस ईश्वर की सत्ता के प्रतिपादन तथा अभ्यास और सत्यभाषण से अपनी वाणियों को शुद्ध कराए विद्वान् होके सब पदार्थ विद्याओं को प्राप्त होवें।
2. **विद्या और धर्म की वृद्धिः** मनुष्यों को चाहिए कि सत्कार के योग्य का सत्कार और निरादर के योग्य का निरादर करके विद्या और धर्म को निरन्तर बढ़ाया करें।
3. **शिक्षा की प्राप्तिः** हे मनुष्यों! आत्मा, मन और शरीर के साथ विद्याओं में नियत होके विद्या ओर सुशिक्षा का संचय करो। द्वितीय विद्या जन्म को प्राप्त पाकर पूजित होवो, जिस—जिस के साथ अपना सम्बन्ध हैं, उस को जानो।
4. **सब जीवों की रक्षाः** हे मनुष्यों! जैसे सर्वत्र अभिव्याप्त ईश्वर ने सबकी रक्षा वा पुष्टि की है, वैसे ही बढ़े हुए हम लोगों को चाहिए कि सब जीवों को बढ़ावें और पुष्ट करें।
5. **स्वात्मवत् व्यवहारः** जो राग.द्वेष आदि दोषों को छोड़ कर सबमें अपने आत्मा के तुल्य बर्ताव करते हैं, उन धर्माताओं के लिए सब जल, ओषधि आदि पदार्थ सुखकारी होते हैं।

परमेश्वर ने हमें मनुष्य योनि कृत्कर्मों के भोग के लिए तो दी ही है परन्तु उन्नति करने के लिए भी दी है। अथर्ववेद में एक मन्त्र इस प्रकार है.

उद्यानं ते पुरुषं नावयानं जीवातुं ते दक्षतातिं कृणोमि।
आ हि रोहेममृतं सुखं रथमथ जिर्विर्विदथमा वदासि।।

इस मन्त्र का भावार्थ यह है कि मनुष्य की गति सदैव ऊपर की ओर होनी चाहिए, उसे जीवन में ऊपर उठना चाहिएए नीचे नहीं गिरना चाहिए। परमेश्वर ने मनुष्य को बल से युक्त किया हैए उसे अमृतरूप सौ वर्ष तक जीने योग्य जीवन दिया है और इस देह को सुखपूर्वक धारण करते हुए जीर्ण होकर बुढ़ापे में भी उसे जीवन के ज्ञानमय अनुभव का उपदेश करने की आज्ञा दी है।

मनुष्य को अपने जीवन मार्ग पर चलने के लिए सद्गुणों की आवश्यकता होती है। सत्त्व गुणों के धारण करने से वह उन्नति करता है, ऊपर की ओर उठता है ओर उसके चरित्र, व्यवहार, संकल्प आदि कल्याणकारी मार्गों की ओर ले जाने वाले होते हैं। राजस गुण की प्रधानता से चंचलता और विलासिता आदि के गुणों की वृद्धि होती हैं तमोगुण की प्रबलता से आलस्य, अविद्या और निष्क्रियता रहती है ओर मनुष्य पतन की ओर अग्रसर होता है। यह मनुष्य के जीवन में ही सम्भव है कि ज्ञान, कर्म, परोपकार, आध्यात्मिकता को प्राप्त करते हुए इन सबकी समृद्धि करे। पशु.पक्षी आदि केवल अपने स्वाभाविक ज्ञान के आधार पर ही जीवन बिता देते हैं। वे न तो ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और नही उनके लिए आध्यात्मिक उन्नति का काई अवसर उपलब्ध हैं। केवल मनुष्य ही संसार में ऐसा प्राणी है जिसे यह जीवन उन्नति करने के लिए मिला है।

योगदर्शन में कहा गया है.

''भोगापवगार्थम् दृश्यम्'' अर्थात् यह संसार का दृश्य जीव के भोग के और अपवर्ग के लिए है। इस संसार में रह कर मोक्ष साधना करना भी सम्भव है। ज्ञान प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम अपने को वेद का अध्ययन करने के लिए सक्षम करना होगा। इसके लिए शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष .इन छः वेदांगों का अध्ययन करके तदोपरान्त उपनिषदों, षडदर्शनों और इन समस्त शास्त्रों के उपरान्त वेदों का गहन अध्ययन करके मनुष्य वास्तविक ज्ञान के मार्ग पर चल पड़ता है, इसीलिए मनुस्मृति में कहा गया है–

यथा.यथा हि पुरुषः शास्त्रस्य समधिगच्छति।
तथा.तथा विजानीति विज्ञानं चास्य रोचते।।

अर्थात् मनुष्य जैसे.जैसे शास्त्र का विचार कर उसके यथार्थ भाव को प्राप्त होता हैए वैसे.वैसे अधिक जानता जाता है और उसकी प्रीति विज्ञान में होती जाती है। महर्षि कहते हैं कि जैसे.जैसे मनुष्य शास्त्रों को यथावत् जानता है, वैसे–वैसे उस विद्या का विज्ञान बढ़ता जाता है और उसमें रुचि बढ़ती रहती है। ज्ञान का लाभ तभी है जब वह आचरण में अपनाया जाए अन्यथा मनुष्य का शरीर मिलने पर भी वह विभिन्न प्रकार के विकारों से ग्रसित हो जाता है।

भौतिक जगत् के जिस ज्ञान को आजकल विज्ञान कहते हैं, उसी को उपनिषद् में अपराविद्या कहा गया है। अभ्युदय और भौतिकता अविद्या के पर्याय हैं। इसी प्रकार निःश्रेयस और आध्यात्मिकता विद्या के पर्याय हैं। यजुर्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है.

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदो भयंसह।
अविद्ययया मृत्युं तीर्त्वा विद्यया ऽ मृतमश्नुते।।

इस मन्त्र में विद्या का अर्थ विद्या से प्राप्त ज्ञान से शुद्ध कर्म और उपासना करना है। जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ–साथ जान लेता है और उसी के अनुसार कर्म भी करता है, वह कर्म और उपासना के यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। यदि उसे किसी कारण से मोक्ष प्राप्ति नहीं हो पाती है तब भी वह मोक्ष मार्ग के सोपान पर कदम रखते हुए फिर से अवसर पाने के लिए मनुष्य जन्म को पाने का अधिकारी बन जाता है ओर मनुष्य जीवन पाना उसके लिए दुर्लभ नहीं रहता है।

वेदों का आविर्भाव कब, कैसे व क्यों हुआ?

–मनमोहन कुमार आर्य

संसार में जितने भी पदार्थ है उनकी उत्पत्ति होती है और उत्पत्ति में कुछ मूल कारण व पदार्थ होते हैं जो अनुत्पन्न वा नित्य होते हैं। इन मूल पदार्थों की उत्पत्ति नहीं होती, वह सदा से विद्यमान रहते हैं। उदाहरण के लिए देखें कि हम चाय पीते हैं तो यह पानी, दुग्ध, चीनी व चायपति से मिलकर बनती है। ईधन, चाय के पात्र आदि इसमें साधारण कारण होते हैं। चाय के लिए आवश्यक सभी पदार्थों को चाय बनाने के कारण पदार्थ कहते हैं। चाय बनाने में प्रयोग की जाने वाली चीनी गन्ने के रस से बनती है। गन्ने को किसान अपने खेतों में उत्पन्न करता है। गन्ने के लिए खेत में गन्ने का बीज बोया जाता है अथवा गन्ने की कलम रोपी जाती है। खेत हमारी सृष्टि का ही एक अंग हैं। यह सृष्टि अणुओं व परमाणुओं से मिलकर बनी है। परमाणु इलेक्ट्रान, प्रोटान व न्यूट्रान आदि कणों से बने हैं। परमाणुओं से पूर्व की स्थिति पर विज्ञान में भी सम्भवतः विचार नहीं किया जाता। परमाणु किस पदार्थ से कैसे बने इसका ज्ञान उपलब्ध नहीं है। अतः परमाणु ही कार्य सृष्टि का मूल पदार्थ है जिससे उत्तरोत्तर कई चरणों में यह समस्त सृष्टि बनी है। दर्शन में सत्, रज व तम गुणों वाली अनादि व नित्य प्रकृति को सृष्टि का मूल कारण बताया गया है। सृष्टि की रचना के समय परमात्मा इस सृष्टि में विक्षोभ उत्पन्न करते हैं। पहला विकार महतत्व व दूसरा अहंकार होता है। यह पूरी प्रक्रिया दर्शन आदि ग्रन्थों में देखी जा सकती है। सृष्टि को बनाने वाली सत्ता ज्ञानवान चेतन सत्ता ही होती है। यह समस्त ब्रह्माण्ड जिसमें असंख्य सूर्य, चन्द्र, पृथिवी व अन्य लोक लोकान्तर आदि हैं, अपने आप नहीं बन सकते और न ही नियमों का पालन करते हुए सूर्य के चारों ओर, अपनी धुरी पर व उपग्रह ग्रह के चारों ओर गति कर सकते हैं। जिस सत्ता ने इस सृष्टि को बनाया है और जो इस सृष्टि को चला रहा है, उसी को परमात्मा व ईश्वर कहते हैं।

सृष्टि की रचना ज्ञानादि नियमों से युक्त एक चेतन सत्ता से हुई है, अतः सृष्टि का स्रष्टा ईश्वर समस्त ज्ञान व शक्ति का भण्डार सिद्ध होता है। विशाल सृष्टि को देखकर ईश्वर सर्वव्यापक व आंखों से दिखाई न देने से सर्वातिसूक्ष्म व रंग आदि गुणों से रहित सिद्ध होता है। प्रश्न है कि वेदों की उत्पत्ति वा आविर्भाव कैसे व किससे हुआ? इसके साथ वेद क्या हैं, यह जानना आवश्यक है। वेद संस्कृत भाषा में तथा मन्त्र रूप में छन्दोबद्ध रचना का नाम है। वेद के सभी पद अर्थों से युक्त है। वेद का कोई भी पद रूढ़ नहीं अपितु धातुज, यौगिक वा योगरूढ़ हैं। वेदों के पदों के व्युत्पत्ति का ज्ञान पद में प्रयुक्त धातु से होता है और उसका अर्थ निघण्टु व निरुक्त की निर्वचन प्रणाली से किया जाता है। यह एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। संसार की अन्य भाषाओं में वैदिक संस्कृत भाषा के समान नियम व सिद्धान्त लागू नहीं होते क्योंकि अन्य सभी भाषाओं के पद रूढ़ होते हैं, धातुज या यौगिक नहीं होते। वेद मन्त्रों पर दृष्टि डालने व उनके अर्थों पर विचार करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि वेद मनुष्यकृत रचना नहीं है अपितु यह अपौरूषेय ग्रन्थ है। पौरूषेय या

मनुष्यकृत रचना इस लिए नहीं है कि सृष्टि के आरम्भ में जो मनुष्य उत्पन्न हुए वह भी तो हमारी ही तरह के थे। बच्चा जब उत्पन्न होता है तो वह भाषा नहीं जानता। माता–पिता व आस पास के सगे सम्बन्धियों से वह उनकी भाषा सीखता है। संस्कृत तो सर्वोत्कृष्ट भाषा है। वह मनुष्य रचित न होकर ईश्वर प्रदत्त है। अन्य सभी भाषायें संस्कृत का विकार हैं जो सृष्टि के आदि काल से निरन्तर होता आया है।

अब प्रश्न यह सामने आता है कि सृष्टि के आरम्भ में मनुष्यों को किसने उत्पन्न किया और किसने उन्हें भाषा सिखाई व वेदों का ज्ञान कराया। इस प्रश्न पर वेदों के मर्मज्ञ ऋषि दयानन्द जी ने भी विचार किया था। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में यह सिद्ध किया है कि सृष्टि की आदि में परमात्मा ने अमैथुनी सृष्टि उत्पन्न की और मनुष्यों के रूप में युवावस्था में स्त्री व पुरूषों को उत्पन्न किया। इन मनुष्यों में चार ऋषि वा पुरुष अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नाम के हुए। यह चारों मनुष्य ऋषि अर्थात् उच्च कोटि के विद्वान थे। यह पूर्वजन्म की पवित्र आत्मायें थी जिस कारण इनकी आत्माओं में ज्ञान ग्रहण करने की सर्वाधिक सामर्थ्य थी। सर्वव्यापक परमात्मा ने इन चार ऋषियों को अपना ज्ञान जिसे वेद के नाम से जानते हैं और आज भी वह सृष्टि के आदि काल जैसा ही शुद्ध रूप में उपलब्ध है, उस ज्ञान को इन चार ऋषियों की आत्माओं में स्थापित किया था। यह समझना आवश्यक है कि ईश्वर व जीवात्मा दोनों चेतन हैं। चेतन में ज्ञान प्राप्त करने व ज्ञान देने की क्षमता वा सामर्थ्य होती है। ईश्वर पहले से ही, अनादि काल से, सृष्टि में ज्ञान व विज्ञान का अजस्र स्रोत है। उसने इस सृष्टि से पूर्व अनादि काल से अनन्त बार ऐसी ही सृष्टि को बनाया है व सृष्टि का एक कल्प की अवधि तक पालन करने के बाद उसकी प्रलय भी की है। उसका ज्ञान का स्तर हमेशा एक समान रहता है। वह कभी कम व अधिक नहीं होता।

चारों वेद उस ईश्वर के ज्ञान में अनादि काल से विद्यमान वा वर्तमान हैं और अनन्त काल तक इसी प्रकार रहेंगे। ईश्वर सभी जीवात्माओं के भीतर व बाहर विद्यमान है। वह ईश्वर अपनी सामर्थ्य से ही इस समस्त सृष्टि सहित मनुष्यादि प्राणियों की भी रचना करता है। उसी ने हमारे शरीर में बुद्धि, मन व अन्तःकरण आदि अवयवों को बनाया है। उसने ही हमें बोलने के लिए न केवल जिह्वा वा वाक् दी है अपितु सुनने के लिए श्रवणेन्द्रिय भी दी है। ईश्वर को हमें जो भी बात कहनी व समझानी होती है उसकी वह हमारी आत्मा के भीतर प्रेरणा कर देता है जिसे ज्ञानी मनुष्य जान व समझ सकते हैं। जिस मनुष्य का आत्मा जितना अधिक शुद्ध व पवित्र होता है उतनी ही शीघ्रता व पूर्णता से वह ईश्वर की प्रेरणा को ग्रहण कर सकता व समझ सकता है। ईश्वर ने अपने इस गुण व क्षमता का उपयोग कर सृष्टि के आरम्भ में मनुष्यों की अमैथुनी सृष्टि हो जाने पर चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन, अब से 1,96,08,53,122 वर्ष पूर्व, चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा की आत्माओं में प्रेरणा करके ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद का ज्ञान उनके अर्थ सहित स्थापित किया था। शतपथ ब्राह्मण अति प्राचीन ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में इस विषय की चर्चा है। चार ऋषियों ने एक एक वेद का ज्ञान ईश्वर से प्राप्त कर उसका उपदेश ब्रह्मा जी नाम के अन्य ऋषि को किया। इससे ब्रह्मा जी को चारों वेदों का ज्ञान हुआ।

ब्रह्मा जी ने चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया तो उनका यह कर्तव्य था कि वह वेद ज्ञान से रहित आस पास के स्त्री व पुरुषों को वेदों का ज्ञान कराते। उन्होंने अन्य ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य

आदि के सहयोग से यह कार्य किया और उपदेश द्वारा सभी व अधिक से अधिक लोगों तक वेदों का ज्ञान पहुंचाया। आदि सृष्टि में ईश्वर ने जो अमैथुनी सृष्टि की थी उसमें सभी पवित्र आत्माओं को उत्पन्न किया था जिनकी ज्ञान प्राप्त करने व उसे स्मरण रखने सहित शरीर की सामर्थ्य भी वर्तमान मनुष्यों की तुलना में बहुत अधिक थी। वह मनुष्य जो सुनते थे वह उन्हें स्मरण रहता था। उनके शरीर भी स्वस्थ थे और हम अनुमान कर सकते हैं कि वह सब लम्बी आयु तक जीवित रहे थे। उन्होंने वेद ज्ञान प्राप्त कर अपने अनुरूप वर वधु निश्चित कर विवाह किये और कालान्तर में मैथुनी सृष्टि का होना आरम्भ हुआ। तब से यह जन्म–मरण सहित वेद में वर्णित विवाह आदि परम्परायें चल रही हैं और वेदज्ञान भी परम्परा से चला आ रहा है। इस प्रकार से ईश्वर से चार ऋषियों की हृदय गुहा में स्थित जीवात्माओं को वेदों का ज्ञान प्राप्त हुआ और वेदोपदेश व वेदाध्ययन की परम्परा आरम्भ हुई जो महाभारत काल तक अबाध रूप से चली। महाभारत काल व उसके बाद यह परम्परा बाधित हुई परन्तु ऋषि दयानन्द (1825–1883) ने आकर इसे पुनः प्रवृत्त किया। ऋषि दयानन्द के प्रयत्नों के कारण ही आज हमें चारों वेद अपने सत्यार्थ सहित संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी व अन्य भाषाओं में उपलब्ध हैं। यह वेदों के आविर्भाव की यथार्थ कथा है।

वेदों में ईश्वर, जीव, प्रकृति सहित मनुष्यों के कर्तव्य–कर्मों आदि का विस्तृत ज्ञान है। वेदों की भाषा और ज्ञान की सहायता से मनुष्य अपना जीवन सुखी रखते हुए व उन्नति करते हुए व्यतीत कर सकते हैं। वेदों का अध्ययन कर मनुष्य यदि चाहें तो जीवन के सभी क्षेत्रों में ज्ञान व विज्ञान की उन्नति कर सकते हैं। हमारे ऋषि मुनि पर्यावरण प्रेमी थे। वह यज्ञ अग्निहोत्र करते हुए वेदाध्ययन एवं अनुसंधान कार्य करते थे और प्रकृति में प्रदुषण व विकार नहीं होने देना चाहते थे। जिस क्षेत्र में जो आवश्यक था वह आविष्कार उनके द्वारा किया गया। महाभारतकाल व उससे पूर्व का भारत ज्ञान विज्ञान की दृष्टि से उन्नत व सम्पन्न था। ऐसा वर्णन भी मिलता है कि प्राचीन भारत में निर्धन लोगों के पास भी अपने अपने विमान हुआ करते थे और वह देश व विश्व का भ्रमण करते थे। तीव्र गामी समुद्री नौकायें व यान भी होते थे जिनसे हमारे देश के लोग पाताल लोक व विश्व के अनेक भागों में जाते थे। इन बातों की झलक ऋषि दयानन्द के पूना में दिए गये इतिहास विषयक प्रवचनों में मिलती है। वेदों को पढ़कर ही हमें अपने कर्तव्यों, जीवन के उद्देश्य व उसकी पूर्ति के साधनों का ज्ञान होता है। ऋषि दयानन्द ने अपने ज्ञान व अनुभव के आधार पर घोषणा की है कि वेद सब सत्य विद्वाओं की पुस्तक हैं। वेद का पढ़ना पढ़ाना एवं सुनना–सुनाना सब मनुष्यों वा आर्यों का परम धर्म है। वेद हमें सही रीति से ईश्वरोपासना करना सिखाने के साथ वायु, जल व पर्यावरण आदि को शुद्ध करने की विधि यज्ञ अग्निहोत्र आदि का ज्ञान भी कराते हैं। सभी मनुष्यों को वेदाध्ययन कर अपना जीवन सुखी व सफल बनाना चाहिये और वेदों की रक्षा में योगदान देना चाहिये।

वेदों का आविर्भाव ईश्वर से हुआ है। ऐसा ईश्वर ने मनुष्यों को सभी विषयों व कर्तव्यों का ज्ञान कराने के लिए किया। संसार के सभी रीति रिवाजों व परम्पराओं पर वेदों का न्यूनाधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वेदों के अध्ययन व वेदों की शिक्षाओं पर आचरण कर हम धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति कर सकते हैं। इन चार पुरुषार्थों की प्राप्ति ही मनुष्य जीवन का उद्देश्य व लक्ष्य है।

ईश्वरोपासना अर्थात् सन्ध्या क्यों करें

–मनमोहन कुमार आर्य

सन्ध्या भली भांति ईश्वर का ध्यान करने को कहते हैं। यही ईश्वर की पूजा कहलाती है। इससे भिन्न प्रकार से यदि ईश्वर की पूजा आदि करते हैं तो जो लाभ ईश्वर के सत्यस्वरूप का ध्यान व चिन्तन करने से मिलता है, वह अन्य प्रकार से या तो मिलता नहीं या बहुत कम मिलता है। ज्ञानी व विज्ञान कर्मी जानते हैं कि यदि हम कोई भी काम करें और वह ज्ञान विज्ञान के अनुकूल न हो तो सफलता नहीं मिलती। इसी प्रकार से यदि हम ईश्वर की पूजा, ध्यान व उपासना आदि करते हैं तो हमें उसकी विधि के ज्ञान के अनुरूप होने पर पहले विचार कर लेना चाहिये। ईश्वर का ध्यान व सन्ध्या करने से पूर्व हमें ईश्वर व आत्मा के विषय में ज्ञान होना चाहिये। ईश्वर क्या है? इस प्रश्न का एक उत्तर यह है कि ईश्वर वह है जिसने इस सारी सृष्टि को बनाया है, जो इसका पालन व संचालन कर रहा है, इसे सृष्टि को धारण करना भी कहते हैं तथा जो इस सृष्टि की अवधि वा आयु पूर्ण होने पर इसकी प्रलय करता है। ईश्वर ने इस सृष्टि, इसके लोक–लोकान्तर ही नहीं बनाये अपितु हमारी पृथिवी पर अग्नि, वायु, जल, आकाश आदि पदार्थों की उत्पत्ति सहित समस्त अन्न, फल, वनस्पतियों व ओषधियों एवं गाय आदि प्राणियों को भी उसी ने हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बनाया है। ईश्वर का सत्य स्वरूप सृष्टि के आरम्भ में सबसे प्रथम ईश्वर ने ही वेदों के द्वारा प्रकाशित व उद्घाटित किया था। विचार करने पर हम पाते हैं कि यदि ईश्वर वेदों का प्रकाश न करता तो हम ईश्वर, जीवात्मा सहित अन्य पदार्थों का ज्ञान कदापि प्राप्त नहीं कर पाते। इसके अतिरिक्त ईश्वर ने वेदों का प्रकाश कर हमें भाषा प्रदान की व हमें बोलना भी उसी ने सिखाया है। वेदों के आधार पर ईश्वर का जो स्वरूप हमारी दृष्टि में आता है उसका उल्लेख ऋषि दयानन्द जी ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय सहित लघु ग्रन्थों स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश, आर्योद्देश्यरत्नमाला एवं आर्यसमाज के दूसरे नियम में भी किया है। समूचे वेद भाष्य में भी हमें ईश्वर के यथार्थ व सत्य स्वरूप के दर्शन होते हैं।

हम यहां आर्यसमाज के दूसरे नियम के अनुसार पाठकों के लिए ईश्वर का सत्य स्वरूप, जैसा कि वेदों से प्राप्त होता है, उद्धृत कर रहे हैं। ऋषि दयानन्द जी लिखते हैं कि 'ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी,

अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।' ऋषि दयानन्द जी ने इन शब्दों में ईश्वर का सत्यस्वरूप बताकर इसी स्वरूप वाले ईश्वर की उपासना का करना आवश्यक बताया है।

वेद यह भी बताते हैं कि इस सृष्टि की रचना वा उत्पत्ति ईश्वर ने अपने किसी निजी प्रयोजन के लिए नहीं की है अपितु अपनी शाश्वत प्रजा चेतन जीवात्माओं की उन्नति व उनको सुख पहुंचाने के लिए की है। ईश्वर ने हमारे कर्मानुसार हमें मनुष्य बनाया है। हम इस जीवन में जो सुख भोग रहे है, अतीत में भोग चुके हैं व आगे भी भोगेंगे उनका आधार व कारण परम पिता परमेश्वर ही है। इस जन्म से पूर्व भी अनन्त बार हम जन्म लेकर इसी प्रकार से व इससे भी अधिक सुख भोग चुकें हैं और भविष्य में अनन्त काल तक भोगेंगे। इसके बदले में हम ईश्वर को अपनी कोई वस्तु क्या दे सकते हैं? यह मनुष्य का स्वभाव है कि वह जब किसी भी मनुष्य से उपकृत होता है तो वह उसका धन्यवाद करता है। वह किसी का ऋण व अहसान लेना नहीं चाहता और यदि लेना पड़ता है तो उसका मूल्य दिया करता है। परमात्मा ने हम पर इतनी कृपा की है कि जितनी अन्य कोई नहीं कर सकता। अतः हम ईश्वर के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हैं और सभी को रखना भी चाहिये। कृतज्ञता का भाव रखने से हमारे अहंकार का नाश होता है। यह ज्ञातव्य है कि अहंकारी मनुष्य का नाश उसके अहंकार के कारण ही होता है। अहंकार कोई अच्छा मानवीय गुण नहीं है। इसका सभी को त्याग करना ही चाहिये। अहंकार के विपरीत विनयशीलता का गुण होता है। मनुस्मृति में एक प्रामाणिक बात कही गई है कि अभिवादन–शील मनुष्य जो प्रति दिन व नियमित रूप से ज्ञान व आयु में वृद्ध लोगों की सेवा किया करता है उसकी आयु, विद्या, यश व बल बढ़ता है। मनु जी के यह विचार समाज में प्रत्यक्ष सत्य सिद्ध होते हुए पाये जाते हैं। अतः आयु, विद्या, यश और बल की प्राप्ति के लिए मनुष्यों को अहंकार का नाश कर विनयशील स्वभाव को धारण करना चाहिये। हम ईश्वर के प्रति मनुष्य के कर्तव्यों पर चर्चा कर रहे हैं। परमात्मा ने हमारे लिए सृष्टि बनाई, हमें माता–पिता के द्वारा सुख का सर्वोत्तम साधन यह मनुष्य शरीर दिया, हमारे लिए संसार में भोजन, वस्त्र, आवास आदि के लिए नाना पदार्थ बनाये और उनका उपयोग करने के लिए वेदों के द्वारा हमें शिक्षा दी, अतः हमारा कर्तव्य है कि हम उस ईश्वर के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हुए उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना किया करें। ऐसा करने से ही हम अपनी हानि से बच सकते हैं और हमें अनेक प्रकार से लाभ पहुंचता है। अतः सभी मनुष्यों को ईश्वर की उपासना वा संन्ध्या आदि कर्म यथासमय अर्थात् प्रातः व सायं की सन्ध्या वेला में अवश्यमेव करने चाहिये।

सन्ध्या कैसे करें? इसके लिए हमें वेद वा वेदानुकुल ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव को बताने वाले ऋषि व आप्त पुरूषों के ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिये। वैदिक विद्वानों द्वारा लिखे गये ईश्वर विषयक ग्रन्थों का अध्ययन करने पर ही हमारी आत्मा ईश्वर के गुणों को ग्रहण करती है। हम जब ईश्वर के सत्य गुण–कर्म–स्वभाव को बताने वाले ऋषियों के ग्रन्थों का अध्ययन करते हैं तो हमारी आत्मा उसे पढ़कर व जानकर उसके सत्य होने की पुष्टि करती है। यह ध्यान रहे कि अध्ययन करते हुए हमें अपने विवेक को जाग्रत रखना होता है। किसी भी बात को आंखे बन्द कर स्वीकार नहीं करना चाहिये। बुद्धि से सत्य व असत्य का विवेचन करके ही सत्य को स्वीकार करना चाहिये। ऐसा करने से ही हम सत्य को जान

पाते हैं और हमें उसके अनुरूप क्रियायें करने से लाभ होता है। स्वाध्याय के लिए सत्यार्थप्रकाश, आर्याभिविनय, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, योगदर्शन, वेद मंजरी, ऋग्वेद ज्योति, यजुर्वेदज्योति, अथर्ववेदज्योति, श्रुति सौरभ आदि ग्रन्थों सहित ऋषि दयानन्द व आर्य विद्वानों के वेदभाष्य पठनीय हैं। इन्हें पढ़कर ईश्वर का सत्य स्वरूप ज्ञात हो जाता है, सारी शंकायें व भ्रान्तियां दूर हो जाती है और ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करने की प्रेरणा मिलती है।

ईश्वर की उपासना न केवल विद्वानों को ही करनी चाहिये अपितु ज्ञानी–अज्ञानी सभी मनुष्यों को भी करनी चाहिये। ईश्वर की उपासना से ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त होता है। हमारे बुरे गुण, कर्म व स्वभाव में सुधार होता है। ईश्वर ज्ञानस्वरूप व आनन्दस्वरूप है। सन्ध्या व उपासना करने से हमारे ज्ञान में वृद्धि होती है और दुःख दूर होकर आनन्द की उपलब्धि होती है। इन लाभों को प्राप्त करने के लिए हमें ईश्वर की भक्ति वा सन्ध्या अवश्य करनी चाहिये। सन्ध्या करने से हमें सत्य कर्मों को करने की प्रेरणा मिलने सहित बुरे कर्मों के प्रति अनिच्छा भी उत्पन्न होती है जिससे हमारा यह जीवन व परजन्म भी सुधरता है। ईश्वर की उपासना के लिए ऋषि दयानन्द जी ने 'सन्ध्या' नाम की एक पुस्तक लिखी है। इसे पढ़कर ही सबको सन्ध्या करनी चाहिये। सन्ध्या से पूर्व व सन्ध्या करते हुए सन्ध्या के अर्थों पर भी दृष्टि डालनी चाहिये व उनके अनुसार चिन्तन व ईश्वर का ध्यान करना चाहिये। सन्ध्या का मन्त्र बोलते हुए उसके अर्थों की भावना भी बननी चाहिये। यदि ऐसा नहीं होगा तो सन्ध्या करने में मन नहीं लगेगा व उससे सन्ध्या करने का लाभ नहीं होगा। मन्त्रों के अर्थ जानने से हमें ईश्वर की हमारे ऊपर जो अहेतुकी कृपा अर्थात् हम पर अकारण कृपा हो रही है व ईश्वर से हमें जो सुख प्राप्त हो रहे हैं, उसका ज्ञान होता है। लेख का विस्तार न कर हम सन्ध्या के समर्पण मन्त्र में उपासक द्वारा ईश्वर को सम्बोधित कर कहे गये शब्दों को प्रस्तुत कर रहे हैं। उपासक ईश्वर को कहता है कि 'हे परमेश्वर दयानिधे! आपकी कृपा से जप और उपासना आदि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त होंवे।' सन्ध्या करने से मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस कारण भी हम सन्ध्या करते हैं। यह उपलब्धि व प्राप्ति न धन से हो सकती है, न रूतबे से व न अन्य किसी प्रकार से। यह प्राप्ति होती है ईश्वर व आत्मा के यथार्थ ज्ञान, स्वाध्याय व ईश्वर का भली भांति ध्यान करने से। यह भी जान लें कि ईश्वर की उपासना से जो सुख व लाभ राजा व बड़े–बड़े धनवानों को नहीं होता वह लाभ ईश्वर भक्तों, उपासकों व योगियों को होता है।

निकट भविष्य में तपोवन आश्रम, देहरादून में पूर्णकालिक प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र विकसित करने की योजना बनाई गई है जिसके लिए दो–दो कमरों वाली 6 कुटिया उपलब्ध हैं जिनका जीर्णोद्धार अपेक्षित है। इसके अतिरिक्त कुछ नवीन कक्षों का निर्माण भी करना आवश्यक होगा। यह निर्णय लिया गया है कि प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र के संचालन के लिए तपोवन सोसायटी (रजि.) के सहयोग एवं मार्गदर्शन के लिए संस्थापक सदस्य (पांच लाख रुपए दान देने वाले) तथा संरक्षक सदस्य (एक लाख रुपए दान देने वाले) बनाये जायेंगे। इन सभी सदस्यों के लिए प्राकृतिक चिकित्सा की निःशुल्क सुविधा उपलब्ध रहेगी।

मृत्यु का स्वरुप क्या है–वैदिक वैज्ञानिक सार

–पं उम्मेद सिंह विशारद, वैदिक प्रचारक

हम आजीवन मृत्यु से बचने का प्रयत्न करते हैंः– हमारा सम्पूर्ण जीवन मृत्यु को सत्य मान कर बना हुआ है। मृत्यु का भय हमारे हर कार्य में सन्निहित है। हम खाते हैं, पीते हैं, परिवार बनाते हैं, हम खाने के लिए कमाते है। हम सड़क पर बाएं और चलते हैं, हम हर समय अपने को असुरक्षित समझते हैं। हम जन्म से मृत्यु तक अपने को बचाने का कार्य करते रहते हैं। हम पुलिस तैयार करते हैं, सुरक्षा हेतु करते हैं। मकान बनाते हैं ताकि हम सर्दी–गर्मी से बचे व सुरक्षित रहें। विश्व भर में मृत्यु का ताण्डव हो रहा है अर्थात मृत्यु से बचने के लिए ही हमारा एक–एक श्वास चल रहा है। हम निरन्तर मृत्यु से जूझने का प्रयत्न करते रहते हैं।

मृत्यु का स्वरुप क्या है

वैदिक विचार धारा का मानना है कि मृत्यु का अस्तिव ही नही है, इसके वास्तविक स्वरुप को समझ लेने से मृत्यु का डर मिट जाता है। हमें मृत्यु को समझने के लिए यह समझना चाहिए कि मृत्यु किसकी होती है शरीर की या आत्मा की। मृत्यु शरीर की होती है क्योंकि शरीर और आत्मा अलग–अलग सत्ताऐं हैं, शरीर आत्मा नही और आत्मा शरीर नही है। आत्मा शरीर को सिर्फ धारण करता है। अर्थात मृत्यु शरीर की होती है आत्मा की नहीं।

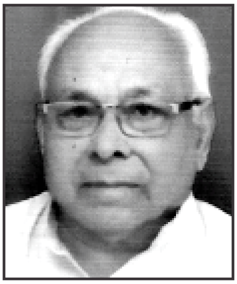

रुपान्तरण का ही दूसरा नाम ''मृत्यु'' है

संसार में किसी वस्तु का नाश नही होता सिर्फ उसका रुप बदल जाता है। विज्ञान का अटल नियम है कि कोई वस्तु नष्ट नही होती रुपान्तरित हो जाती है। ठीक इसी तरह शरीर का नष्ट होने को मृत्यु कहते हैं वह भी शरीर के पांच तत्वों का रुपान्तरण हो जाना है। शरीर तो परमाणुओं के संयोग से बना है इसलिए मृत्यु के समय परमाणुओं का संयोग जाता रहता है। वियोग हो जाता है, परमाणु नष्ट नही होते। भौतिक शरीर परमाणुओं के रुप में परिवर्तित हो जाता है फिर चेतन आत्मा की बात ही दूसरी है जैसे शरीर का रुपान्तरण होता है वैसे आत्मा का भी रुपान्तरण होता है आत्मा एक शरीर छोड़कर दूसरा शरीर धारण कर लेता है इसलिए शरीर के रुपान्तरण को मृत्यु कहा जाता है तथा आत्मा के रुपान्तरण को पुर्नजन्म कहा जाता है। वह चेतन सत्ता आत्मा पंच भौतिक शरीर की तरह विलीन नही हो सकती। विलीन वही वस्तु होती है

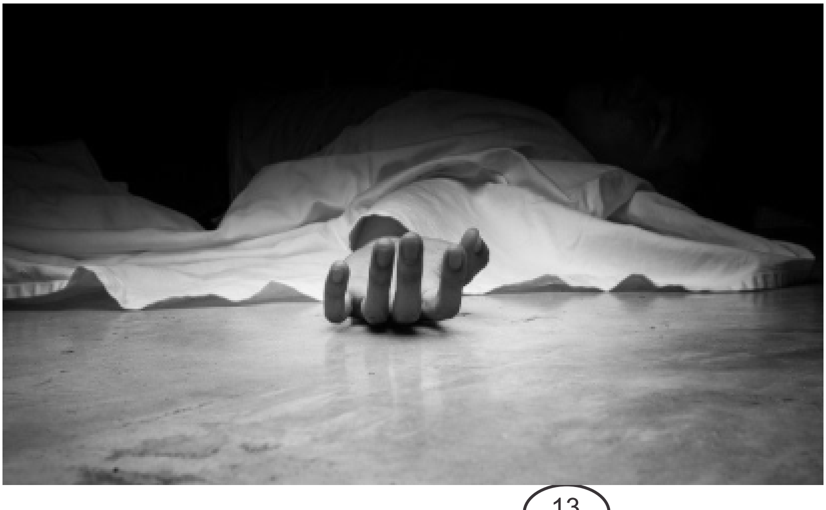

जो भौतिक हो। अगर चेतन सत्ता आत्मा भौतिक हो तो वह चेतन सत्ता नहीं रहती। वह शरीर हो जाती है। यह सत्य है आत्मा का नाश नही होता आत्मा सिर्फ शरीर बदलता है मानो पुराने चोले को फेंक कर नया चोला धारण कर लेता है। इस प्रकार आत्मा के नया चोला धारण कर लेने को ही हम भ्रमवश मृत्यु कह देते हैं। यथार्थ में आत्मा के लिए मृत्यु की कोई सत्ता नही है आत्मा के लिए मृत्यु अयथार्थ है।

वास्तविक सत्ता जीवन की है मृत्यु अयथार्थ है

मृत्यु एक भ्रम है, वह न होते हुए भी प्रचलित हो जाता है। भूत से बड़े–बड़े लोग डरते देखे जाते है, अगर वे जान जाये कि भूत एक भ्रम है तो वह भूत से नही डरेगा। भूत की कोई सत्ता ही नही है हम उसकी कल्पना कर लेते हैं। मृत्यु का स्वरुप भी ऐसा ही है क्योंकि जिसकी सत्ता न हो उससे डरने की कोई आवश्यकता नही है। मृत्यु छाया के समान है जैसे भूत का अस्तित्व नही वैसे ही छाया का भी अस्तित्व नही है। छाया प्राणी का पीछा करती है मृत्यु से भय खाना अपनी छाया से डर जाने के समान है। मृत्यु एक निंद्रा है हम रोज–रोज सोते हैं किन्तु सुबह तरो–ताजा उठते हैं। शरीर जब थक जाता है तो तब आत्मा उसे सुला देता है। शरीर जब काम के लायक नही रहता तब आत्मा इसे छोड़ देता है।

हम समझते हैं कि जीवन व मृत्यु दो स्वतंत्र सत्ताऐं है। एक तरफ जीवन खड़ा है दूसरी तरफ मृत्यु खड़ी है परन्तु ऐसा नही है यथार्थ सत्ता जीवन की है मृत्यु अगामी जीवन में प्रपेश द्वार है। जीवन में मृत्यु और मृत्यु में जीवन घुला–मिला है, जहाँ हम जीवन देखते हैं वहीं मृत्यु भी छिपी बैठी है। जीवन और मृत्यु भिन्न–भिन्न दृष्टियों में एक ही वस्तु के दो नाम है।

शरीर रथ है आत्मा रथी है

यह शरीर रथ के समान है आत्मा इस रथ का मालिक है जो इस रथ पर बैठकर जीवन यात्रा पर निकलता है। रथ को चलाने वाला साइस होता है यह कार्य बुद्धि का है जिसके हाथ में मन रुपी लगाम है। रथ में इन्द्रियां रुपी घोड़े जुते हैं, संसार के विषय वे मार्ग हैं जिन पर इन्द्रिय घोड़े भागते चले जा रहे हैं। आत्मा के आदेश के अधीन मन तथा इन्द्रियां चलती हैं। रथ पर सवार आत्मा के लिए यह जीवन एक पड़ाव है। जब रथ पर चढ़कर कोई किसी मंजिल पर जाता है तब रास्ते में पड़ाव पड़ते हैं। इसी प्रकार जीवन की यात्रा में आत्मा शरीर–मन– इन्द्रियों के रथ पर संवार होकर निकलता है। जब ये वाहन बेकार हो जाते हैं तब वह इन्हें छोड़ कर नया वाहन जुटा लेता है। इन वाहनों को छोड़ देना यात्री की मृत्यु नही है। सिर्फ नये पड़ाव पर नया साधन जुटा लेना है। आश्चर्य इस बात का है कि जीवन की यात्रा में शरीर रुपी रथ को बदल लेने को हम मृत्यु कह देते हैं जो हमारी भूल है, मृत्यु नाश नहीं बल्कि अगामी जीवन में प्रवेश करने का द्वार है।

शरीर आत्मा का वस्त्र है

सांप के विषय में सब जानते हैं कि वह पुरानी केचुंली को बदल कर नयी केचुंली धारण कर लेता है। शरीर भी आत्मा की केचुंली है। जब शरीर पुराना हो जाता है आत्मा के काम का नही रहता तब आत्मा उसे बदल डाल देता है। इसी बदलने की क्रिया को लोग मृत्यु कहते हैं। चोला बदलने से चोला पहनने वाला नष्ट नही होता सिर्फ पुराने चोले की जगह नया चोला ओड़ लेता है। जैसे कपड़े पुराने हो जाने पर मनुष्य उन्हें उतार फेंकता है और नये वस्त्र पहन लेता है, इसी प्रकार जब शरीर पुराना हो जाता है तब देह को धारण

करने वाला यह आत्मा नये शरीर को धारण कर लेता है। जीर्ण–शीर्ण शरीर होता है, आत्मा जीर्ण–शीर्ण नही होता है।

जिस आत्मा से हमारा शरीर व्याप्त है वह अविनाशी है। इस आत्मा की सत्ता का कोई भी विनाश नही कर सकता है। यह जो दिख रहा है शरीर है और न दिखने वाला आत्मा इस शरीर का स्वामी अशरीरी है उसका अन्त नही होता है। आत्मा के विषय में जो यह समझता है कि यह मरता है वह सत्य को नही समझते। आत्मा न मरता है और न मारता है।

जीवन तो एक रेलगाड़ी है। स्टेशन आते रहते हैं। जिसे जिस स्टेशन पर उतरना होता है वह वहां उतर जाता है और रेलगाड़ी आगे चल देती है। जो यात्री उतर जाता है वह मर नही जाता है उसकी यात्रा समाप्त हो जाती है और अगली यात्रा शुरु हो जाती है।

वैदिक ऋषियों की खोज

वैदिक ऋषियों ने करोड़ों वर्ष पहले सत्य की खोज कर ली थी। उन्होनें कहा था हे ईश्वर मैं कितने भ्रम जाल में फंसा हुआ हूँ, मैं असत में उलझा हुआ हूँ, मुझे सत की तरफ जाने की प्रेरणा दो, मैं अन्धकार में भटक रहा हूँ। मेरा मुख प्रकाश की तरफ फेर दो, मैं मृत्यु को अपना अन्त समझ रहा हूँ, मेरी आँखें खोल दो ताकि मैं देख सकूं कि मैं अमर हूँ अविनश्वर हूँ, मरण रहित हूँ।

क्या मृत्यु का भय उचित है

जन्म–जन्म के संस्कारों के कारण आत्मा में मृत्यु का भय बना रहता है। विद्वानों का कहना है कि मृत्यु भय का कारण नहीं है लेकिन हम देखते हैं कि प्रायः सभी साधारण व्यक्तियों को मृत्यु समय में भय सताता है। इसका कारण यह है कि जिन व्यक्तियों को अपने परिवारजनों, व्यापार, धन, पद, लोकेष्णा आदि में **आसक्ति** रहती है उन्हें मृत्यु से भय लगता है लेकिन तपस्वी, विद्वान, वैरागी, साधु, महात्मा, देश पर शहीद होने वाले क्रान्तिकारी, निष्काम कर्मयोगी को मृत्यु का भय नहीं सताता। ऐसे व्यक्ति महर्षि दयानन्द की तरह हंसते–हंसते मृत्यु का आलिंगन कर लेते हैं। इसलिए मृत्यु का भय अनुचित है।

कमर सीधी रख

समं कायशिरोग्रीव धारयन्नचलं स्थिर।

संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् 6 ।। 13।।

सभी को कमर सीधी करके चलना चाहिए। कमर झुकाकर चलने की आदत शीघ्र बुढ़ापे की ओर ले जाती है– सुषमा नाड़ी से ही शरीर का बैलेंस बनता है और कमर सीधी कर, मन को सब ओर से हटा, नासिका के अग्र भाग पर ध्यान करता हुआ श्वास प्रश्वास के साथ मन को लगा। जब मन श्वास के साथ ठहरना शुरु हो जायेगा और फिर कहीं नहीं भागेगा। फिर अभ्यास करते–करते मन को हृदय गुफा में परमात्मा में आत्मा की डुबकी लगा और आनन्द से भाव विभोर हो। फिर आगे बढ़ेगा और नहीं तो संसार में ऐसे ही भटकता रहेगा। आनंद तो उस परमात्मा में ही है। संसार के तुच्छ अधिक सुख कहां और ईश्वर भक्ति का आनंद कहां– इसलिए भारतीय संस्कृति में तो सभी वृद्धावस्था से पूर्व ही उस परमानंद की तैयारी करने लगते थे। अब तो सब कुछ गवांकर नरक भोग रहे हैं। परमात्मा से सद्‌बुद्धि मांग और योग कर।

(गीता पढ़ो आगे बढ़ो पुस्तक से साभार)

गुरुकुल पौंधा देहरादून का 22वां वार्षिकोत्सव सोल्लास सम्पन्न

आचार्य अपने आचरण से छात्रों को सदाचरण की शिक्षा देता हैः डा. सोमदेव शास्त्री

–मनमोहन कुमार आर्य

देहरादून स्थित गुरुकुल पौंधा का तीन दिवसीय 22वां वार्षिकोत्सव दिनांक 5–6–2022 को सोल्लास सम्पन्न हुआ। उत्सव की मुख्य विशेषता यह थी आयोजन में एम.डी.एच. मसालों के स्वामी महाशय राजीव गुलाटी जी के प्रतिनिधि श्री अनिल अरोड़ा जी पधारे और उन्होंने बताया कि महाशय राजीव गुलाटी जी अपनी ओर से गुरुकुल के भोजन आदि कार्यों का पोषण करेंगे। आर्यसमाज के नेता श्री आर्यवेश भी समारोह में उपस्थित थे। प्रमुख विद्वानों में डा. रघुवीर वेदालंकार, डा. सोमदेव शास्त्री, डा. योगेन्द्र याज्ञिक, डा. सूर्यादेवी चतुर्वेदा, डा. आचार्या अन्नपूर्णा, पं. इन्द्रजित् देव, आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री, पं. नरेशदत्त आर्य, पं. दिनेश पथिक, पं. कुलदीप आर्य, पं. दधीचि, पं. ऋषिपाल जी, ब्रह्मचारी सौरभ आर्य आदि विद्वान एवं भजनोपदेशक उपस्थित थे जिनके व्याख्यानों एवं भजनों से श्रोताओं को ज्ञान से पूर्ण व्याख्यान एवं भक्ति गीत सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सभी आये अतिथियों ने गुरुकुल में दुर्लभ सत्संग का लाभ उठाया और सन्ध्या एवं यज्ञ करने सहित वैदिक साहित्य के स्वाध्याय की प्रेरणा ग्रहण की। कार्यक्रम पूर्णतः सफल रहा।

यज्ञ के ब्रह्मा डा. सोमदेव शास्त्री ने इस अवसर पर कहा कि तीन दिनों से चला आ रहा सामवेद पारायण यज्ञ आज समाप्त हुआ। उन्होंने आशीर्वाद देते हुए कहा कि ईश्वर सब यजमानों पर हर क्षण और हर पल सुखों की वर्षा करते रहें। ईश्वर धरती जैसी सहनशीलता हमें प्रदान करें। हम सभी के मनों में उदारता हो। हम सब ऐश्वर्य सम्पन्न हों। सूर्य व चन्द्र की तरह हम भी लोगों को प्रेरणा दें सकें। परमात्मा का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए हम सब नित्य प्रति यज्ञादि शुभ कर्म करते रहें।

सत्संग में स्वामी श्रद्धानन्द जी ने कहा कि संसार की सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत को बचाने में गुरुकुलों का योगदान महत्वपूर्ण है। स्वामी जी ने कहा कि यदि हमें वेद, उपनिषद, दर्शन आदि वैदिक साहित्य की रक्षा करनी है तो हमें गुरुकुलों की रक्षा करनी होगी।

डा. रघुवीर वेदालंकार जी ने अपने व्याख्यान में कहा कि यहां गुरुकुल में ज्ञान की गंगा बह रही है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि यहां उपस्थित लोग अपने घरों को जाते समय अपने मन में सुख व शान्ति का अनुभव करेंगे।

उत्सव में पधारी विदुषी आचार्य डा. सूर्यादेवी जी ने कहा कि हमारी बुद्धि ज्ञान से सम्पन्न होनी चाहिये। हमारी प्रज्ञा के अनुसार हमारा कार्य होना चाहिये। उन्होंने कहा कि जहां सब मिल जुल कर रहते हैं उसे कुल कहते हैं। हमं परिवार में संगठित होकर रहना आना चाहिये। अपनी इन्द्रियों को हमें हमेशा ही धर्म में लगाना चाहिये।

द्रोणस्थली कन्या गुरुकुल का रजत जयन्ती समारोह

गुरुकुल, वेद एवं संस्कृत का महत्व

–मनमोहन कुमार आर्य

देहरादून स्थित द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरुकुल महाविद्यालय का तीन दिवसीय रजत जयन्ती समारोह एवं वार्षिकोत्सव दिनांक 6–6–2022 से आयोजित किया गया। दिनांक 7–6–2022 को उत्सव के दूसरे दिन प्रातःकाल यज्ञ के साथ गुरुकुल की 25 स्नातिकाओं के समावर्तन संस्कार सम्पन्न किये गये। इस भव्य कार्यक्रम में गुरुकुल की आचार्या डा. अन्नपूर्णा जी सहित डा. आचार्या सूर्या कुमारी चतुर्वेदा जी, डा. महावीर अग्रवाल जी, आर्यसमाज के अन्तर्राष्ट्रीय कथाकार पं. चन्द्र शेखर शास्त्री जी, ठाकुर विक्रम सिंह जी, पं. शैलेश मुनि सत्यार्थी तथा स्वामी विशुद्धानन्द जी (उड़िसा) सहित अनेक विभूतियां सम्मिलित थी। गुरुकुल आश्रम में पधारे सभी अतिथिगणों ने भी इस समारोह में भाग लिया। इस अवसर पर उत्तराखण्ड सरकार के कैबिनेट मंत्री श्री गणेश जोशी जी भी सपत्नीक पधारे थे। उनका गुरुकुल की ओर से सम्मान किया गया तथा उनका प्रेरणादायक एवं सहयोगात्मक उद्बोधन भी सभागार में उपस्थित सभी गुरुकुलवासियों एवं अतिथियों को सुनने को मिला।

संस्कार विधि के अनुसार समावर्तन संस्कार की सभी विधियां गुरुकुल के प्रांगण में एक बड़ा पण्डाल लगा कर सभी अतिथियों के सम्मुख भव्य समारोह में पूरी की गईं। इस अवसर पर स्नातिकाओं ने अपने दण्ड एवं मेखलायें अपनी आचार्या डा. अन्नपूर्णा जी को लौटाईं। इस अवसर पर डा. अन्नपूर्णा जी ने कहा कि आचार्य लोग धनवान तो नहीं होते पर हृदयवान जरूर होते हैं। सभी स्नातिकाओं को संस्कार विधि में लिखी वस्तुयें यथा छतरियां, घड़ी, वस्त्र, चप्पल आदि भेंट की गई। अन्नपूर्णा जी ने अतिथियो ंको कहा कि आप लोगों ने हमारे गुरुकुल व इसकी स्नातिकाओं को दिल खोलकर आशीर्वाद दिया है। यही हमारी पूंजी है। स्नातिकाओं से आचार्या जी ने कहा कि यहां आपने जो पढ़ाई लिखाई की है, उसे सभी को अपने जीवन में उतारना है। आचार्या जी ने अपनी स्नातिकाओं को सत्य वद धर्म चर का उपदेश दिया। उन्होंने स्नातिकाओं को अपने जीवन में सच्चाई व ईमानदारी के रास्ते पर रहने की प्रेरणा की। परमात्मा तुम्हारा साथ देगा। उन्होंने एक वाक्य बोला **नहीं मैं अनाथ, मेरा नाथ तो परमात्मा है**। उन्होंने यह भी बताया कि सुख का मूल धर्म है। इसलिये सभी को जीवन में धर्म का पालन करना है।

इसी के साथ तीन दिवसीय समावर्तन संस्कार एवं दीक्षान्त समारोह सम्पन्न हुआ।

'कर्म भोग फल'
जीव हत्या का परिणाम

–डॉ. डी. के. गर्ग

प्रश्न – जानबूझकर किसी व्यक्ति, पक्षी, पशु आदि की हत्या का ईश्वर क्या दंड देगा'?

उत्तर – किसी प्राणी की हत्या जो निम्न उदेश्य से ना कि गयी हो क्योंकि

इन पाँच परिस्थितियों में हथियार उठाना श्रेष्ठ है ।

(१) आत्म रक्षा, (२) धर्म रक्षा, (३) राष्ट्र रक्षा,

(४) स्त्री रक्षा और (५) गौ रक्षा

वीर पुरुष इन पांच परिस्थितियों में हथियार उठाते है।

अन्यथा हत्या का दोष लगेगा। जिसकी सजा देने का कार्य न्यायालय करती है जो ईश्वर द्वारा निर्धारित दंड से कम या ज्यादा हो सकती है। इस स्थिति मे ईश्वर अपनी न्याय व्यवस्था द्वारा पूर्ण कर देता है। वैसे तो कर्म फल व्यवस्था अत्यंत गूढ़ है जिसे केवल ईश्वर ही ठीक प्रकार से जानता है लेकिन हमारे ऋषि मुनि इस दिशा मे इशारा करते है।

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्त्ता चोपहंता च खादकश्येति घातकः।।

मनुस्मृति 5/51

अर्थात 'अनुमति देने वाला, शस्त्र से मरे हुए जीव के अंगों के टुकड़े–टुकड़े करने वाला, मारने वाला, खरीदने वाला, बेचने वाला, पकाने वाला, परोसने या लाने वाला और खाने वाला यह सभी जीव वध में घातक–हिंसक होते हैं।'

जो स्वयं तो मांस नहीं खाता, परन्तु खाने वाले का अनुमोदन करता है, वह भी भाव–दोष के कारण मांसभक्षण के पाप का भागी होता है। इसी प्रकार जो मारने वाले का अनुमोदन करता है, वह भी हिंसा के दोष से लिप्त होता है। मनुस्मृति 6/8

प्रश्न है कि एक व्यक्ति ने दूसरे प्राणी को मार डाला जो मनुष्य भी हो सकता है और पशु पक्षी आदि भी, इसका क्या परिणाम या दंड होना चाहिए? इसका दोष है ईश्वर की आज्ञा पालन में व्यवधान डालना और दूसरे प्राणी को उसके जन्म के प्रारब्ध के अनुसार कर्म भोग से रोकना और हत्या करना।

ईश्वर इस व्यक्ति को ज्यादा कठोर दंड देगा जिसमें उसको मरें व्यक्ति, पशु, पक्षी के रुके हुए बाकी कर्म भी अगले जन्म मे करने पड़ेंगे। इसलिए उसके अच्छे परिवार में जन्म की संभावना लगभग शून्य हो जाएगी क्योंकि उसके दुष्कर्म की सजा अधिक बढ़ते जाएंगे। इस आलोक मे जो मांस खाते हैं, बेचते हैं, जीव हत्या करते हैं वे जन्म जन्म तक पशु बनते रहेंगे और सांसारिकता का बोझ ढोते रहेंगे।

श्रेष्ठ भावना से शान्ति

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् 2।। 66।।

जिसकी बुद्धि ठीक नहीं है और जिसकी विचार भावना ठीक नहीं है वह सदा चंचल अशान्त बना रहेगा और अशान्त व्यक्ति को कहां से कैसे सुख मिलेगा।

(गीता पढ़ो आगे बढ़ो पुस्तक से साभार)

कुछ महत्वपूर्ण द्रव पदार्थ व उनके गुण

–आचार्य बालकृष्ण

हम अपने दैनिक जीवन में अनेक पदार्थों का उपयोग करते हैं परन्तु इनके विषय में कुछ विशेष जानकारी नहीं रखते कि ये हमारे लिए कितने उपयोगी हैं, इनका प्रयोग कब और किस प्रकार से करें? आइए, इन तथ्यों को जानें तथा तदनुसार उपयोगी पदार्थों का ही सेवन करें और जो पदार्थ हमारे अनुकूल नहीं हैं, उनका सेवन छोड़ दें अथवा उन्हें अनुकूल बना कर प्रयोग में लाएं।

दही

दही भारी, स्निग्ध, अभिष्यन्दी (स्रोतों में रुकावट पैदा करने वाला), रस और विपाक में अम्ल उष्णवीर्य, ग्राही (कब्ज करने वाला) वातनाशक, रक्त, कफ–पित्त बढ़ाने वाला, दीपन (पाचन शक्ति को बढ़ाने वाला), बलकारक, पौष्टिक और वृष्य (शुक्र बढ़ाने वाला), भोजन में रुचि बढ़ाने वाला होता है। उदररोग (पेट के रोग), पीनस, विषम–ज्वर, (मलेरिया), दुर्बलता, मूत्रकृच्छ्र (मूत्रत्याग में कठिनता) और शीतज्वर (सर्दी के साथ चढ़ने वाले बुखार) में लाभकारी है। विधिपूर्वक सेवन न किया गया व अधिक मात्रा में सेवन किया दही सूजन, रक्त के रोग, ज्वर, रक्तपित्त और पीलिया रोग को उत्पन्न करता है।

दही की मलाई– बलकारक, वृष्य (शुक्रवर्धक) और रक्तार्श (खूनी बवासीर) में लाभकारक है।

दही का पानी (मस्तु)–लघु, दीपन (पाचन शक्ति बढ़ाने वाला), ग्राही (कब्जकारक), वात का अनुलोमक, स्रोतों को शुद्ध करने वाला और मल–पदार्थों का अनुलोमन करने वाला है।

मक्खन निकला दही– रूक्ष, विष्टम्भी (पेट में वातकारक), ग्राही (कब्ज) और वात–वर्धक हैं, परन्तु ग्रहणी रोग में लाभकारी हैं।

मन्द (पूरी तरह से ना जमा हुआ) दही– इसका सेवन नहीं करना चाहिए। क्योंकि यह अभिष्यन्दी होने से बहुत हानिकारक माना गया है।

दही सेवन की विधि

सामान्यतया आयुर्वेदानुसार रात्रि में दही नहीं खाना चाहिए। दही का सेवन करते समय इसमें घी, शहद, चीनी, मूंग की दाल या आँवला चूर्ण, लवण भास्कर चूर्ण, हिंग्वाष्टक चूर्ण आदि में से कुछ न कुछ अवश्य मिला लेना चाहिए। अर्थात् इन पदार्थों के बिना दही का सेवन नहीं करना चाहिए। दही, को आग या घूप आदि से गर्म करके नहीं खाना चाहिए। कफ–पित्तकारक होने से ग्रीष्म, वसन्त और शरद् ऋतुओं में दही का सेवन निषिद्ध किया है। वर्षा, हेमन्त और शिशिर ऋतुओं में दही का सेवन उचित माना गया है। दही में पानी डालकर लस्सी बनाई जा सकती है इसमें उचित मात्रा में लवण या शहद आदि मिलाकर तथा कढ़ी व रायता आदि के रूप में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

तक्र

मट्ठा (छाछ) बनाने के लिए दही में जल डाल कर उसे मथा जाता है अथवा बिना जल के भी दही को मथ कर तक्र तैयार किया जाता है। दही के स्वाद के अनुसार ही तक्र भी मधुर (मीठा), खट्टा और बहुत खट्टा हो सकता है। न्यूनाधिक जल मिलाने के आधार पर तथा न्यूनाधिक स्नेह (मक्खन) निकालने के आधार पर तक्र के भिन्न–भिन्न भेद होते हैं।

बिना जल के केवल दही को मथ कर तैयार किया गया तक्र 'घोल', एक–चौथाई जल मिलाकर तैयार किया गया 'तक्र' तथा आधा जल मिलाकर

तैयार किया 'उदश्वित' कहलाता है। स्नेह (घी) निकाल कर बिना जल मिलाए मथा गया दही 'मथित' कहलाता है। दही में पर्याप्त मात्रा में जल मिलाकर व मथकर घी निकालने पर छाछ बनती है। छाछ लघु, शीतल, वातपित्त–शामक और कफ कारक होती है। नमक मिला कर लेने पर यह पाचन शक्ति को बढ़ाती है। पूर्णतः घी निकाल कर तैयार किया गया तक्र बहुत हल्का और पथ्य (हितकर) माना गया है। घी निकाले बिना तैयार किया तक्र बहुत भारी (गरिष्ठ), बलकारी और कफकारक होता है।

तक्रसामान्य के गुण

तक्र (मट्ठा)– लघु, मधुर, अम्ल, कषाय, मधुरविपाक, कफ–वात–नाशक, अग्निदीपक, स्रोतों को स्वच्छ करने वाला, ग्राही (मल को बांधने वाला), हृद्य (हृदय के लिए लाभकारी), मूत्र अधिक लाने वाला और लेखन, ग्रहणी रोग, बवासीर, सूजन, पेट के रोग, मूत्र में रुकावट, प्लीहा (तिल्ली), गुल्म, घी से उत्पन्न रोगों (मेदोरोग), कृत्रिम विष और पाण्डु को दूर करता है। आधुनिक अनुसन्धानों के अनुसार भी तक्र मेदोरोग से उत्पन्न हृदय के रोगों को दूर करता है।

अपक्व तक्र, छाछ (मट्ठा) कोष्ठ में जमा कफ को तो नष्ट करता है, परन्तु गले में कफ को उत्पन्न करता है। अतः पीनस, खाँसी, दमा और गले के रोगों में ताजे तक्र का प्रयोग न करके पके तक्र को प्रयोग में लाना चाहिए।

कफ और वात के रोगों में तक्र को आयुर्वेद में उत्तम औषधि के रूप में माना गया है।

अलग–अलग औषध–द्रव्यों के साथ तक्र के गुण भी अलग–अलग हो जाते हैं, जैसे–

अल्प अम्ल तक्र में सोंठ व सेंधा नमक का मिश्रण– वात–विकारों में लाभकारी।

अम्लता रहित मधुर तक्र में शर्करा का मिश्रण– पित्त–विकारों में लाभकारी।

तक्र में त्रिकटु (सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली) और यवक्षार का मिश्रण– कफ–विकारों में लाभकारी।

तक्र में हींग, जीरा और सेंधा नमक का मिश्रण– वातनाशक, बवासीर, अतिसार, संग्रहणी, अग्निमांद्य व बस्ति (पेड़ू) दर्द में उपयोगी।

तक्र में गुड का मिश्रण– मूत्रकृच्छ् में लाभकारी

तक्र में चित्रक का मिश्रण–पाण्डु रोग में लाभकारी।

ज्यादा खट्टा तक्र हानि पहुँचाता है, अतः उसका सेवन नहीं करना चाहिए। उरःक्षत (छाती में घाव) या दुर्बलता, मूर्च्छा, चक्कर, जलन और रक्तपित्त (रक्तस्राव) में एवं वर्षाकाल की गर्मी में तक का प्रयोग नहीं करना चाहिए। तक्र कल्प आंव, संग्रहणी व जीर्ण संग्रहणी में सर्वोत्तम औषध का कार्य करता है।

मक्खन

मक्खन दो प्रकार का होता है– (1)दही से निकाला गया और (2)दूध से निकाला गया, इसे नवनीत या नैनू कहते हैं।

दही से निकाला गया ताजा मक्खन मधुर, कषाय और विपाक में थोड़ा मधुर, लघु, स्निग्ध, शीतवीर्य, वातपित्त–शामक, वर्णप्रसाद करने वाला, अग्नि को बढ़ाने वाला, संग्राही, वृष्य (शुक्रवर्धक), हृद्य (हृदय के लिए प्रिय व उपयोगी) और मेध्य (बुद्धिवर्धक) होता है। यह क्षय, खाँसी, बवासीर और अदिंत रोग (लकवा) को नष्ट करता है। दूध से निकला हुआ मक्खन बहुत शीतल, चक्षुष्य (आँखों के लिए लाभकारी) संग्राही और रक्तपित्त नाशक है। अर्दित रोग में यह विशेष रूप से लाभ पहुँचाता है।

घी

जब मक्खन को अच्छी तरह पकाते हैं, तब पकने के बाद छाछ के अंश को अलग करने से जो पदार्थ तैयार होता है, उसे घी कहते हैं। सभी प्रकार के स्निग्ध (तैलीय व चिकने) पदार्थों में घी सबसे अच्छा माना गया है, क्योंकि अन्य औषधियों के साथ पकाने से यह उनके बल को बढ़ा देता है। किसी दूसरे स्नेह (तेल, वसा आदि) में यह गुण नहीं है। सभी प्रकार के घी में गाय का घी सबसे उत्तम माना गया है।

घी गुरु, स्निग्ध, मधुरविपाक व शीतवीर्य होता है। यह बुद्धि, स्मरण शक्ति, मेधा, बल, आयु, पुष्टि, शुक्र, दृष्टि, सन्तान, कान्ति, सुकुमारता और स्वर में वृद्धि करने वाला अच्छा रसायन है। घी हृदय को ताकत देने वाला एवं वृद्धों के लिए भी लाभदायक है। घी मानसिक रोगों, ज्वर, दाह (जलन), उन्माद (पागलपन), क्षय व क्षतक्षीण में, शस्त्र के घाव और अग्नि से जलने पर भी लाभ पहुँचाता है। वात का अनुलोमन करता है व पाचन शक्ति को बढ़ाता है। स्रोतों से दोषों को निकाल कर उन्हें स्वच्छ करता है।

घी का प्रयोग अनेक प्रकार से किया जाता है, जैसे– पान करना, किसी औषधि में मिला कर व पका कर सेवन करना, मालिश, नस्य और अनुवासन बस्ति (एनिमा) के रूप में लेना इत्यादि।

रक्तपित्त (रक्तस्राव) होने पर घी का नस्य, पार्श्वशूल में पुराने घी की मालिश और कृशता (पतलापन), कमजोरी, उदावर्त, खाँसी, गर्भपात, पुराना ज्वर और तिमिर रोग में घी का सेवन (पान) अच्छा रहता है। दूध और घी का नित्यप्रति सेवन सभी रसायनों में श्रेष्ठ माना गया है।

तेल

स्नेह–पदार्थों में घी के बाद तैल (तेल) का स्थान आता है। सामान्यतः 'तैल' शब्द पहले तिल से? निकले स्नेह के लिए प्रयुक्त होता था, परन्तु बाद में सरसों आदि से निकले स्नेह के लिए भी इस शब्द का प्रयोग होने लगा।

आयुर्वेद के अनुसार तेल सामान्य रूप से मधुर व अनुरस में कषाय, होता है। यह उष्ण, व्यवायी अर्थात् पहले शरीर में फैल कर बाद में पचने वाला होता है, तिल का तेल कफवर्धक नहीं होता। यह पित्तवर्धक, बल को बढ़ाने वाला तथा त्वचा के लिए लाभदायक होता है। मांसपेशियों को स्थिर, मजबूत और पुष्ट करने वाला, मेधा को बढ़ाने वाला, दीपन (पाचनशक्ति को बढ़ाने वाला) और मल को बाँधने वाला तथा बहुमूत्र को दूर करने वाला है। यह योनि मार्ग को शुद्ध करता है। वातशामक द्रव्यों में तेल सबसे उत्तम माना गया है। औषधियों द्वारा संस्कारित किये (पकाये) जाने पर तेल उन औषधीय गुणों को भी अपने अन्दर ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार प्रयोग करने यह सभी प्रकार के रोगों को नष्ट करता है।

शरीर पर तेल की मालिश करने से वात का प्रकोप, थकान और बुढ़ापे के लक्षण दूर होते हैं। दृष्टि निर्मल होती है। त्वचा स्वच्छ, सुन्दर और कान्तिपूर्ण होती है। झुर्रियां नहीं पड़ती, शरीर पुष्ट होता है और नींद अच्छी आती है। सिर पर तेल की मालिश करने से सिर दर्द, गंजापन, कम अवस्था में बाल सफेद होना और बाल झड़ना आदि शिकायतें दूर होती हैं।

आयुर्वेद के अनुसार तेल में एक विशेष गुण यह भी पाया जाता है कि यह जहाँ दुबले व्यक्ति का दुबलापन दूर करता है, वहीं मोटे व्यक्ति का मोटापन भी दूर करता है। व्यवायी होने से तेल स्रोतों में बहुत जल्दी प्रवेश कर जाता है। दुर्बल व्यक्ति के स्रोत संकुचित होते हैं और तेल अपने लेखन एवं तीक्ष्ण (तीखापन) आदि गुणों से स्रोतों

को तुरन्त खोल देता है। इससे स्रोतों की सिकुड़न समाप्त होने से एक ओर शरीर पुष्ट हो जाता है और कृशता (पतलापन) दूर हो जाती है तो दूसरी ओर सूक्ष्म होने के कारण मोटे व्यक्ति के स्रोतों में भी पहुंच कर चर्बी कम करता है, जिससे मोटापा घट जाता है। आधुनिक दृष्टि से भी तेल में असंतृप्त वसाम्ल पाया जाता है, जो मोटापे एवं उससे उत्पन्न मधुमेह, हृदय–रोग आदि में हानिकारक नहीं माना जाता।

इसी तरह तेल ग्राही अर्थात् मल बांधने और कब्ज दूर करने वाले दोनों ही गुणों से युक्त माना गया है क्योंकि यह मल (पुरीष) को बाँधता है और स्खलित मल को बाहर निकाल देता है। एक वर्ष के बाद घी की पौष्टिकता कम हो जाती है, परन्तु तेल जितना पुराना होता है, उतना ही अधिक गुणकारी बन जाता है।

जो तेल जिस पदार्थ से निकाला गया है, उसमें उसी पदार्थ के गुण पाये जाते हैं। मुख्यतः तिल, सरसों, नारियल, अलसी के तेलों का प्रयोग किया जाता है। इनके गुणों का संक्षेप में वर्णन इस प्रकार है–

तिल का तेल

तेलों में तिल का तेल सबसे अच्छा माना जाता है। इसका प्रयोग बाह्य रूप से (मालिश करने) और आन्तरिक रूप से (सेवन हेतु) किया जाता है। यह तीक्ष्ण (तीखा) और व्यवायी (शरीर में तुरन्त (फैलने वाला), भारी, बलकारक, स्थिरता प्रदान करने वाला, दस्त व वात–कफ शामक, उष्ण, स्पर्श में शीतल, पौष्टिक, लेखन, मल को बांधने वाला, बहुमूत्र–निवारक, पाचक, शक्तिवर्धक, बुद्धि बढ़ाने वाला, शरीर में हल्कापन लाने वाला, गर्भाशय को शुद्ध करने वाला, घाव, प्रमेह (मूत्र से सम्बन्धित रोग), योनिरोग और मस्तक के दर्द एवं कान के रोगों को नष्ट करने वाला है। खाने से यह त्वचा, बालों और नेत्रों के लिए कम लाभकारी है, परन्तु मालिश करने से त्वचा, हृदय, बालों और नेत्रों के लिए अधिक लाभकारी होता है। चोट, मोच, घाव, जले हुए अंग और हड्डी टूटने आदि में भी यह उपयोगी है। इसका प्रयोग नस्य, सिकाई, मालिश और कान में डालने के लिए भी किया जाता है। भोजन बनाने में भी इसका उपयोग होता है। इसकी एक विशेषता है कि स्निग्ध होते हुए भी यह कफ को नहीं बढ़ाता तथा मालिश करने से पित्त को शान्त करता है।

सरसों का तेल

कटु, स्पर्श और वीर्य में उष्ण, तीक्ष्ण (तीखा), हल्का, कफवातहर, शुक्रनाशक, पित्त और रक्त को दूषित करने वाला, लेखन व पाचक होता है। यह चकत्ते आदि चर्म रोगों, सिर और कान के रोगों तथा कृमि(कीड़ों) को नष्ट करने वाला है। प्लीहा (तिल्ली) की वृद्धि में यह तेल उत्तम माना गया है।

मूंगफली का तेल

यह उष्ण, गुरु (भारी), स्निग्ध, कफ–वात शामक, दाह करने वाला और पित्तवर्धक होता है। त्वचा पर इसकी मालिश करने से स्निग्धता की अपेक्षा रूखापन आता है। आजकल भोजन को पकाने में इसका बहुत उपयोग किया जाता है।

नारियल का तेल

दक्षिण भारत में घी के स्थान पर प्रायः इसका प्रयोग किया जाता है। यह भारी, शीतल, वातपित्त–शामक और कफवर्धक होता है। गर्मी में सिर में लगाने से यह शीतलता देता है तथा बालों के लिए हितकर होता है।

अलसी का तेल

यह तेल मधुर–अम्ल, उष्ण, विपाक में कटु, कफ,

पित्त और रक्त को कुपित करने वाला, वात–शामक और त्वचा के रोगों को उत्पन्न करने वाला है।

मधु (शहद)

मधु मधुर, गाढ़ा, चिपचिपा, पीलापन, लालिमा व कालापन लिये भूरे रंग का तरल पदार्थ है। जिसकी उत्पत्ति मधुमक्खियों के द्वारा एकत्र किये हुए फूलों के पराग से होती है। यह शरीर में प्रकुपित हुए तीनों दोषों पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। सामान्यतः यह कषाय मधुर रस वाला, शीत, रूक्ष, भारी तथा कफ, विष, रक्तपित्त, प्यास और हिक्का को नष्ट करने वाला होता है। नया शहद पुष्टि करने वाला, थोड़ी मात्रा में कफ को नष्ट करने वाला होता है, तो पुराना शहद अत्यन्त लेखन, कब्ज, चर्बी और मोटापा नष्ट करने वाला होता है। शहद अच्छा योगवाही है अर्थात् जिस–जिस गुण वाले द्रव्य के साथ मिला कर इसका प्रयोग किया जाता है, यह उसके गुणों से युक्त हो जाता है। अतः आयुर्वेदीय औषधियों में अनुपान के रूप में सबसे अधिक इसका प्रचलन है।

1. शहद में उपस्थित जीवाणुरोधी तथा आक्सीकरणरोधी गुणों के कारण यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर शरीर की बीमारियों से रक्षा करता है।
2. यह त्वचा को नमी प्रदान कर त्वचा को मुलायम बनाता है तथा क्षतिग्रस्त त्वचा का पुनः निर्माण करके घावों को भरता है।
3. यह जमे हुए कफ को टुकड़े–टुकड़े करके बाहर निकालता है।
4. यह सन्धानीय होने से घाव को शुद्ध करके शीघ्र रोपण करता है।
5. यह प्राकृतिक रूप से शरीर के विषैले पदार्थों को बाहर निकालता है।
6. यह शरीर को बल प्रदान करता है।
7. उचित मात्रा में सेवन करने से यह क्षुधा एवं पाचक अग्नि को बढ़ाता है।
8. यह त्वचा के वर्ण को निखारता है।
9. यह प्रमेह, कुष्ठ, कृमि, वमन (उल्टी), श्वास, कास और अतिसार को नष्ट करने वाला, घावों को भरने वाला और शुद्ध करने वाला होता है।

संस्मरण

महर्षि दयानन्द संरस्वती एक बार लाहौर के आर्य समाज के एक उत्सव में सम्मिलित होने के लिए पधारे थे। समाज के आर्य–जनों ने स्वामी दयानन्द जी को अपने आर्य समाज का प्रधान बनाना चाहा, किन्तु उन्होंने इससे साफ इन्कार कर दिया। तब वहां के आर्य–बन्धुओं ने पुनः आग्रहपूर्वक प्रार्थना की– "अच्छा भगवन्! यदि आप प्रधान–पद को स्वीकार नहीं करते तो कृपया आप हमारे समाज के परम–सहायक ही बन जाइये।" यह सुनकर ऋषिवर ने उत्तर दिया– "यदि आप मुझे परम–सहायक बनाते हो तो परमात्मा का क्या बनाओगे?" ऋषि दयानन्द जीवनपर्यन्त कामिनी, कंचन, कीर्ति और पदलालसा से हमेशा दूर रहे।

स्वर्ग और नरक

–स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

''स्वर्ग का अर्थ है, जहां पर सुख के सभी साधन उपलब्ध हों। जैसे कि माता–पिता पढ़े–लिखे हों, धार्मिक बुद्धिमान सदाचारी चरित्रवान हों, धन संपत्ति पर्याप्त हो, खाने पीने की कठिनाई न हो, आपस में प्रेम संगठन सद्भावना सेवा नम्रता सभ्यता दान दया आदि गुण हों। ऐसे स्थान या परिवार में जो विशेष सुख मिलता है, इसको 'स्वर्ग' कहते हैं।'''

और नरक की स्थिति इससे उलटी है। ''जहां माता पिता अनपढ़ हों, मूर्ख गरीब दुखी हों, आपस में लड़ाई–झगड़ा करने वाले असभ्य हों, खाने पीने की कोई विशेष सुविधा न हो, अच्छा मकान आदि सुविधाएं न हों, सब प्रकार से वहां दुख चिंता भय तनाव आदि का वातावरण हो, ऐसी स्थिति को 'नरक' कहते हैं।''

स्वर्ग और नरक कोई आसमान में अलग स्थान नहीं है। स्वर्ग और नरक जो भी है, सब यहीं पर है। इसी पृथ्वी पर है। '''जो व्यक्ति अच्छे काम करता है, वह जीते जी भी सुखी रहता है, और उसे अगले जन्म में भी स्वर्ग की प्राप्ति होती है, जैसा कि स्वर्ग ऊपर बताया गया है।'' ''इसी प्रकार से जो व्यक्ति अपने जीवन में बुरे कर्म करता है, वह इस जन्म में भी दुखी रहता है, चिंतित और तनाव युक्त रहता है, तथा उस का अगला जन्म भी ऐसे ही खराब परिवार में दुख दायक स्थिति में होता है, जैसा कि ऊपर बताया गया है, उसी का नाम नरक है।''

और जो लोग बहुत भयंकर अपराध करते हैं, वे तो 'महानरक' में जाएंगे। ''ये जो संसार में कुत्ता गधा घोड़ा हाथी बंदर भेड़िया शेर समुद्री जीव जंतु जंगली जानवर आदि दिखाई देते हैं, ऐसी योनियों में जाकर महादुःख को भोगना, इसी का नाम 'महानरक' है।''

यदि आप इसी जीवन में स्वर्ग जैसा अनुभव करना चाहते हों, सुख–शांति आनंद से जीना चाहते हों, तो उसका उपाय है, ''अपने माता–पिता बड़े बुजुर्गों गुरुजनों आदि की सेवा करके, उन का आशीर्वाद लेवें। उनके आदेश निर्देश का पालन करें। और जो आपसे छोटे हैं, उनको सुख देकर, उनसे शुभकामनाएं प्राप्त करें। इसी से आपका यह जन्म भी अच्छा होगा और अगला भी।''

सूचना

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नाला पानी, देहरादून में स्थाई निवास हेतु विद्वान, योगी आर्य सन्यासी की आवश्यकता है। भोजन, दूध, आवास आदि की समस्त व्यवस्थायें आश्रम द्वारा निःशुल्क की जायेंगी। इच्छुक सन्यासी महानुभाव यज्ञ एवं प्रवचन आदि में निपुण होने चाहिए।

‘पारस्परिक अभिवादन’: विश्लेषण

–डॉ. डी. के. गर्ग

‘किसी परिजन, मित्र या अन्य किसी से मिलते समय जय गुरु देव, राम राम, हरे कृष्ण, राधे–राधे, सत श्री अकाल, गुड़ मॉर्निंग आदि से सम्बोधन करने की वास्तविकता’?

मित्रों, धीरे–धीरे हमारा सर्वमान्य अभिवादन ’नमस्ते’ समाप्त होता जा रहा है और इसके स्थान पर रोज नित नए अभिवादन नाम जुड़ रहे है। ये नए–नए नाम क्या हमारे वास्तविक अभिवादन हैं या इसका कोई अन्य प्रयोजन लिया जाये? इसके गुण दोष पर विचार करते है।

1. वास्तविक और प्राचीन अभिवादन’ नमस्ते का अर्थ :

‘‘नमस्ते’’ शब्द संस्कृत भाषा का है। इसमें दो पद हैं–नमः+ते। इसका अर्थ है कि ‘आपका मान करता हूँ।’ संस्कृत व्याकरण के नियमानुसार ‘‘नमः’’ पद अव्यय (विकाररहित) है। इसके रूप में कोई विकार=परिवर्तन नहीं होता, लिङ्ग और विभक्ति का इस पर कुछ प्रभाव नहीं। नमस्ते का साधारण अर्थ सत्कार=मान होता है। आदर सूचक शब्दों में ‘‘नमस्ते’’ शब्द का प्रयोग ही उचित तथा उत्तम है, क्योंकि जब दो सज्जन मिलते है तब उन दोनों का भाव एक–दूसरे का मान करने का होता है।

2. अन्य अभिवादन–

१) किसी महापुरुष के नाम का उच्चारणः हिंदुओं में राम–राम, जय गोपाल, जय राम, जय कृष्ण, राधे–राधे आदि शब्द अभिवादन के लिए प्रयोग करते है परंतु ये वास्तव मे अभिवादन नहीं है ये हमारे महापुरुष के नाम का उच्चारण है। राम और कृष्ण आदि हमारे महापुरुष हैं, इनके आचरण का अनुकरण करना और कराना चाहिए परंतु इनके आदर्शो पर चलने के बजाय केवल इनका नाम लेने से कार्य पूरा नहीं होता है। जैसे चीनी बोलने मात्र से मुंह मे चीनी नहीं आती इसी तरह जय हनुमान बोलने से हनुमान की शक्ति नही आयेगी।

प्रश्न है कि इस प्रकार की परिपाटी क्यों शुरु हुई होगी? उत्तर है कि राम मर्यादा पुरुषोत्तम थे, कृष्ण योगी राज थे, इसलिए आपस में मिलते समय दो मित्र एक दुसरे को ये स्मरण दिलाते है की ‘‘मित्र’’, आप भी राम, कृष्ण की तरह महान बनो, उनके गुण ग्रहण करो और दूसरा भी इसको स्वीकार करते हुए अपनी इच्छा प्रकट करता है कि आप भी ऐसे ही बनें।

परन्तु ये किसी को भी सदाचरण में लाने और स्मरण का उचित तरीका तो हो सकता है परंतु अभिवादन बिल्कुल भी नहीं। इसके अतिरिक्त एक दुसरे को राम या कृष्ण के आदर्शों पर चलने की नसीहत देने से पूर्व राम कृष्ण को ठीक से समझ लेना भी जरूरी है, ये महापुरुष आर्य थे।

२) अभिवादन में ईश्वर का नाम लेना जैसे नमो नारायण, जय शिव, जय गुरु, हरिओम, आदि भी दोषपूर्ण अभिवादन है। इसमें दो मुख्य दोष है

क)–ये आपसी अभिवादन नहीं है और न ही ईश्वर को याद करने, उसके गुण ग्रहण करने का तरीका है।

ख)–‘‘जय गुरु देव’’ इस अभिवादन को करने और स्वीकार करने वाले के सामने ईश्वर के स्मरण के बजाय किसी मनुष्य स्वयंभू गुरु की तस्वीर को ध्यान में रखते हुए बोला जाता है। जैसे गुरुजी श्री रविशंकर के चेले आपस में जय गुरु देव बोलते है।

ये सभी हमारी सभ्यता और वेद विरुद्ध होने

के कारण ठीक नहीं और त्याज्य है।

'जय गुरु देव कौन?'– वेद में ईश्वर को गुरु भी कहा है, ये स्थान कोई अन्य शिक्षक नहीं ले सकता –

'यो धर्म्यान् शब्दान् गृणात्युपदिशति स गुरुः'।

'स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।। योग०।

जो सत्यधर्मप्रतिपादक, सकल विद्यायुक्त वेदों का उपदेश करता, सृष्टि की आदि में अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा और ब्रह्मादि गुरुओं का भी गुरु और जिसका नाश कभी नहीं होता, इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'गुरु' है।

इसलिए किसी शरीर धारी व्यक्ति को गुरु मानकर अभिवादन स्वरूप जय गुरु देव बोलना ईश्वर के प्रति अज्ञानता, नास्तिकता का धोतक है, इससे बचे।

3. ईसाई लोग 'गुड मार्निंग', 'गुड ईवनिंग' बोलने के समय एक दूसरे के लिए सूर्य की धूप और अच्छे दिन के लिए कामना करते है लेकिन ये भी अभिवादन नहीं है। इन शब्दों में एक–दूसरे के मान भाव है ही नहीं।

4. 'नमस्ते और नमस्कार' में अन्तर––प्रायः लोग अभिवादन के लिए नमस्ते और नमस्कार दोनों शब्दों का प्रयोग करते हैं। कुछ लोग मानते हैं। नमस्ते और नमस्कार दोनों का अर्थ एक ही है। दोनों का अर्थ एक ही है तब कहा जाए जब ये एक दूसरे के पर्यायवाची हों। किंतु ये दोनों भिन्न अर्थ वाले शब्द हैं।

नमः का अर्थ सम्मान, ते का अर्थ आप है। अर्थात् मैं आपका सम्मान करता हूँ।

'नमस्कार शब्द जड़ (निर्जीव) वस्तुओं के लिए किया जाता है'। जैसे सूर्य नमस्कार, चन्द्र नमस्कार, सागर नमस्कार इत्यादि। जबकि नमस्ते सम्मानसूचक शब्द हैं। जोकि चेतन(सजीव) के लिए प्रयोग किया जाता है। इसलिए परिजनों के लिए नमस्कार त्यागें और नमस्ते शब्द का ही प्रयोग करें।

4. नमस्ते का वेदों मे प्रमाण– वैदिक काल से वेदों के अन्दर नमस्ते शब्द का प्रयोग है। उसके बाद ऋषियों के ग्रन्थों में भी नमस्ते का ही प्रयोग है और अब भी मनुष्य–मनुष्य के बीच में परस्पर अभिवादन करने के लिए नमस्ते शब्द बहुतायत रूप में प्रचलित है। पुराणों आदि में भी नमस्ते शब्द का ही प्रयोग पाया जाता है। सब शास्त्रों में ईश्वरोक्त होने के कारण वेद का ही परम प्रमाण है, अतः हम परम प्रमाण वेद से ही मन्त्रांश नीचे देते है :–

नमस्ते परमेश्वर के लिए

1. दिव्य देव नमस्ते अस्तु।। –अथर्व० 2/2/1

हे प्रकाशस्वरूप देव प्रभो! आपको नमस्ते होवे।

2. विश्वकर्मन नमस्ते पाह्यस्मान।। –अथर्व०

3. तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।। –अथर्व०

सृष्टिपालक महाप्रभु ब्रह्म परमेश्वर के लिए हम नमन=भक्ति करते है।

4. नमस्ते भगवन्नस्तु।। –यजु० ३६/२१

हे ऐश्वर्यसम्पन्न ईश्वर! आपको हमारा नमस्ते होवे।

बड़े के लिए

1. नमस्ते राजन।। –अथर्व० 1/10/2

हे राष्ट्रपते! आपको हम नमस्ते करते है।

2. तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे।। –अथर्व०

पापियों के लिए मृत्युस्वरूप दण्डदाता न्यायाधीश के लिए नमस्ते हो।

3. नमस्ते अधिवाकाय।। –अथर्व०

उपदेशक और अध्यापक के लिए नमस्ते हो।

देवी (स्त्री) के लिए

1. नमोस्तु देवी।। –अथर्व० 1/13/4

हे देवी ! माननीया महनीया माता आदि देवी ! तेरे लिए नमस्ते हो।

2. नमो नमस्कृताभ्यः।। –अथर्व० 11/2/३१

ज्येष्ठाये नमः–बड़ों को नमस्ते।।

।। कनिष्ठाये नमः –छोटों को नमस्ते ।।

यामाचार्य ने नचिकेता को नमस्ते की–नमस्तेऽस्त् ब्रह्मण स्वस्ति मेऽस्तु (कठोपनिषद)

विश्वामित्र ने वशिष्ठ को नमस्ते की – नमस्तेऽस्तु गामिष्यामि (बाल्मीकि रामायण)

सीता ने राक्षस को नमस्ते की – नमस्ते राक्षसोत्तम (बाल्मीकि रामायण)

देवयानि ने शुक्राचार्य को नमस्ते की – नमस्ते देहि मामस्मैं (महा0 आदिपर्व)

विदुर ने दुर्योधन को नमस्ते की – यथा तथा तेऽस्तु नमश्च (महा0 सभा पर्व)

अर्जुन ने कृष्ण को नमस्ते की – पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते (महाभारत)

कृष्ण ने धृतराष्ट्र को नमस्ते की – शिवेन पाण्डवान् ध्याहि नमस्ते (महाभारत)

ब्रह्मा ने अपने पुत्र को नमस्ते की – नमस्ते भगवन् रूद्र भास्करा मिततेजसे (शिव.वायु.)

गार्गी ने याज्ञवल्क्य को नमस्ते की – सा होवाच नमस्तेऽस्तु याज्ञवल्क्य (बृहद,)

जनक ने याज्ञवल्क्य को नमस्ते की – नमस्तेऽस्तु याज्ञवल्क्यानु मा शाधीति (बृहद)

5. अभिवादन का लाभ–

हमको एक दूसरे से अभिवादन जरूर करना चाहिए .इसके अप्रत्यक्ष लाभ बताए गए है

जैसे –अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम।।

जो व्यक्ति सुशील और विनम्र होते हैं, बड़ों का अभिवादन व सम्मान करने वाले होते हैं तथा अपने बुजुर्गों की सेवा करने वाले होते हैं। उनकी आयु, विद्या, कीर्ति और बल इन चारों में वृद्धि होती है।

अलग अलग अभिवादन होने से हानि–

1. अलग अलग अभिवादन के कारण समाज के अलग अलग गुट में दिखाई देने और विभाजन का खतरा।

2. गलत अभिवादन किसी का सत्कार नहीं है बल्कि निरादर है

3. सही अभिवादन से प्राप्त होने वाले लाभ नही मिलेंगे

4. संगठन की हानि–ऋग्वेद में एक मंत्र आता है, जिसमे कहा है की हमारे मन, विचार, चित्त आदि सामान हो। ''समानो मंत्रः समितिः समानी, समानं मनः सहचित्तमेषाम्। समानं मंत्र अभिमंत्रये वः, समानेन वा हविषा जुहोमि।।

समानी व आकूतिः, समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो, यथा वः सुसहासति ।।

यह स्पष्ट है की अनेक प्रकार के अभिवादन व्यक्तिवाचक, क्षेत्रीयवाचक, वर्गवाचक है, जो साम्प्रदायिकता व संकीर्णता एवं जातिवाद को उभारने वाले होने से देश व समाज के लिए एक अलगाववादी राष्ट्रीय रोग है। विचारों का एक होना मित्रता को प्रगाढ़ करता है। विचार धारा में अन्तर वैचारिक टकराव व मित्रता में दरार पैदा करके अलगाववाद को ही उत्पन्न करता है।

आर्य समाज के आज के गौरव

स्वामी विवेकानन्द सरस्वती

विश्व मानवता के उत्कर्ष तथा भारतीय संस्कृति के पुनर्वैभव के अपने संकल्प की पूर्ति, मानव धर्म एवं मानव संस्कृति का अभ्युदय एवं नवप्रभात लाने के महान उद्देश्य को पूर्ण करने के उपक्रमत्वेन संस्थापित संस्था ''वर्णाश्रम संघ'' के एक केंद्र के रूप में प्रभात आश्रम की स्थापना पूज्य स्वामी समर्पणानंद सरस्वती जी ने की थी ।

श्रद्धेय श्री स्वामी समर्पणानंद सरस्वती जी महाराज के उत्तराधिकारी शिष्य, वर्णाश्रम संघ के सर्वाधिकारी प्रधान, वेद, व्याकरण एवं ब्राह्मण–ग्रंथों के मर्मज्ञ, तपोनिष्ठ पूज्य श्री विवेकानंद सरस्वती जी के आचार्यत्व में एक शिक्षण केंद्र का संचालन विगत 47 वर्षों से (सन् 1972) प्रभात आश्रम के रूप में हो रहा है। पूज्य स्वामी विवेकानंद जी सरस्वती के कृतित्व व व्यक्तित्व का परिचायक गुरुकुल प्रभात आश्रम, नाम से भले ही विश्वविद्यालय न हो, किंतु प्राचीन परंपरा के संपोषक एवं निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने वाले वामन–स्वरूप इस गुरुकुल की कार्यपरिणति एवं उपलब्धि अनेक प्रतिष्ठित विराट् विश्वविद्यालयों से भी अधिक प्रतीत होती है।

प्रभात आश्रम के अनेक स्नातक धर्मार्थ संस्थाओं का संचालन कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त गुरुकुल के अधिसंख्य स्नातक शिक्षा के क्षेत्र में विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं उत्तरमाध्यमिक विद्यालयों में विभिन्न पदों पर कार्यरत हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा कनिष्ठ शोध छात्रवृत्ति (जे०आर०एफ०) हेतु आयोजित राष्ट्रीय योग्यता परीक्षा (नेट) में प्रायः 70 स्नातक उत्तीर्ण हो चुके है।

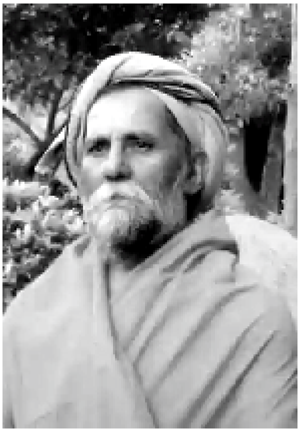

अनुसंधान के उद्देश्य हेतु स्थापित गुरुकुलीय पुस्तकालय आज अपने आकार में वैदिक वाक्य के शोधार्थियों का आकर्षण का केंद्र बनता जा रहा है। वैदिक अनुसंधान के संवर्धन हेतु सन् 1985 में स्वामी समर्पणानंद वैदिक शोध संस्थान की स्थापना की गई। जिसके तत्त्वावधान में वर्ष में दो बार (प्रथम बार प्रातः स्मरणीय स्वामी समर्पणानंद जी महाराज के पुण्य दिवस मकर संक्रांति के पावन पर्व पर तथा द्वितीय बार उनके जन्मदिवस श्रावण शुक्ल एकादशी पर) विभिन्न विश्वविद्यालयों के अनेक वैदिक विद्वानों के सान्निध्य में वैदिक शोध संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है। इस प्रकार अब तक विभिन्न विषयों पर 56 गोष्ठियों का आयोजन हो चुका है। गोष्ठियों में पठित शोध सामग्री एवं अन्य उपयोगी तथ्यों के प्रकाशन हेतु सन् 1986 से त्रैमासिकी शोध पत्रिका का प्रकाशन भी संस्थान द्वारा नियमित रूप से हो रहा है।

गुरुकुल में तीरंदाज प्रशिक्षण का प्रयास सन् 1993 में प्रारंभ किया गया और 1997 में आयोजित राष्ट्रीय खेलों में तीरंदाजी की प्रतिस्पर्धा में स्वर्ण पदक गुरुकुल के विद्यार्थियों ने प्राप्त किए। गुरुकुल के विद्यार्थियों ने राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धाओं में अब तक 160 से अधिक स्वर्ण पदक पिछले सालों में अर्जित किये हैं।

अंतेवासियों में व्यक्तित्व के विकास, भाषण एवं लेखन कला के संवर्धन हेतु ''वाग्वर्धिनी परिषद्'' की प्रवर्तना की गई। जिसके अंतर्गत छात्रों द्वारा हस्तलिखित त्रैमासिकी पत्रिका अनंत विजय का प्रकाशन तथा साप्ताहिक अथवा पाक्षिक अवसर पर निश्चित विषय पर अपनी वाचिक अभिव्यक्ति की प्रस्तुति की जाती है। जिसके परिणामस्वरूप वाक्–प्रतिस्पर्धा, वाद–विवाद प्रतियोगिता, श्लोक गायन, समस्या–पूर्ति, भाषण–प्रतियोगिता, सद्योलघु प्रश्नोत्तरी जैसी अनेक प्रतिस्पर्धाओं की चलवैजयंती एवं अन्य पुरस्कारों पर गुरुकुल के छात्रों का एकाधिकार रहा है। अनेकानेक विद्यार्थी यजुर्वेद और सामवेद कंठस्थ कर अनेक शताब्दी समारोह और सम्मेलनों में गौरव पाकर सम्मानित हो चुके हैं।

प्रचलित पाश्चात्य चिकित्सा पद्धतियों की विसंगतियों से त्रस्त भारतीय जनता को लाभ पहुंचाने हेतु संस्था विभिन्न आयुर्वेदिक ओषधियों का निर्माण धर्मार्थ कर रही है। गुरुकुल में एक भव्य गोशाला भी है, जिसमें प्रायः 40 गौएं हैं। जिनसे सभी कुलवासियों को प्रातः एवं रात्रि शुद्ध दूध की सेवा सर्वार्थ निःशुल्क उपलब्ध कराई जाती है।

समीपवर्ती क्षेत्रवासियों की बौद्धिक एवं आत्मिक उन्नति हेतु गुरुकुल में प्रत्येक माह के द्वितीय रविवार को अपराह्न 2:00 से 5:00 तक नियमित सत्संग का आयोजन पूज्य स्वामी विवेकानंद सरस्वती महाराज के सान्निध्य में होता है। इस प्रकार पूज्य स्वामी विवेकानंद सरस्वी जी द्वारा स्थापित गुरुकुल प्रभात आश्रम संस्कृत और संस्कृति के संरक्षण एवं ज्ञान विज्ञान के प्रचार–प्रसार का मुख्य केंद्र बना हुआ है।

ओ३म्

वैदिक साधन आश्रम

तपोवन, नालापानी, देहरादून

द्वारा आयोजित

शरदुत्सव

बुधवार, 12 अक्टूबर 2022 से

रविवार, 16 अक्टूबर 2022 तक

में आप सादर आमंत्रित हैं

BASANTA MAL SAT PRAKASH

Manufactures of : All Kinds Shawls & Lohies

M : 094171-36756, 70877-54848

GHASS MANDI, LUDHIANA

हमारे पास बेबी सॉफ्ट शॉल, पूजा शॉल, स्टॉल शॉल, मिक्सचर लोई, जैकेट शॉल, कढ़ाई शॉल, कैशमीलोन प्लेन क्लॉथ, चैक शर्टिंग क्लॉथ में हर प्रकार की वैरायटी बनती है और रेट भी कम हैं। कृपया एक बार जरूर सम्पर्क करें।

ARYA TEXTILE

Manufactures of :
All Kinds Handloom Bed Sheets & Furnishing Fabrics

M : 98963-19774, 95412-88174, 98964-01919

Specialist in : BABY BLANKETS & READYMADE CURTAINS

हम Readymade Curtains, Jachets, Guddad, Loi, Mat, Baby Soft Shawls, Baby Blankets, Acrylic Blankete, Rajai Khol (Dohar), Rajai, comforter, AC Set, Velvet Joda & 3D Bed Sheets, Dhari etc. आदि के निर्माता हैं। इसके अलावा मिंक व पोलर कम्बल (Mink & Polar) आदि भी बेचते हैं और रेट भी कम हैं। कृपया एक बार जरूर सम्पर्क करें।

Factory :
Opp. RK School,
Kutani Road, Panipat-132103

Shop :
665/4, Pachranga Bazar,
Panipat-132103

Baby Blankets / Mink Blankets / Quilts / Comforters / Jackets / Duvet Covers / Shawls / Fleece Blankets

वैदिक साधन आश्रम तपोवन

नालापानी देहरादून उत्तराखण्ड़–248008

दूरभाष–0135–2787001

आत्मकल्याण का स्वर्णिम अवसर

सत्यार्थ प्रकाश स्वाध्याय शिविर

तद्नुसार दिनांक 1 अगस्त से 15 अगस्त, 2022

समयः प्रातः 10.30 से 12.30 तक

प्रशिक्षक : श्री महेन्द्र मुनि जी

निवास स्थानः शाखा-2, कुटि नं. 31,
आर्य वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर, हरिद्वार।
फोनः 8178743038

संस्कृत पठन–पाठन शिविर

तद्नुसार दिनांक 16 अगस्त से 31 अगस्त, 2022

समयः प्रातः 10.30 से 12.30 तक

प्रशिक्षक : लोकभाषा प्रचार समिति

मान्यवर महोदय,

सादर नमस्ते!

आपको यह जानकर हर्ष होगा कि अनेक आर्य भाई–बहनों के अनुरोध पर दिनांक 1 अगस्त से 15 अगस्त 2022 तक सत्यार्थ प्रकाश का विस्तारपूर्वक स्वाध्याय कराने के लिए आर्य समाज के मूर्धन्य विद्वान श्री महेन्द्र मुनि जी ने अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी है। इसी के तारतम्य 16 अगस्त से 31 अगस्त 2022 तक लोकभाषा प्रचार समिति के सौजन्य से संस्कृत भाषा के पठन–पाठन एवं वार्ता का आयोजन किया गया है।

नियमः

1. 18 वर्ष से 80 वर्ष आयु के बालक–बालिकाएं एवं अन्य स्त्री/पुरुष शिविर में भाग ले सकते हैं।
2. इच्छुक व्यक्ति दिनांक 25 जुलाई 2022 तक 500 रुपए जमा करके आश्रम कार्यालय में श्री चन्दन सिंह, मो. 7895978734 से सम्पर्क कर के रजिस्ट्रेशन करा सकते हैं। सभी व्यक्ति सत्यार्थ प्रकाश की प्रति एवं डायरी, पैन आदि साथ रखें।
3. बाहर से आने वाले व्यक्तियों के लिए आवास एवं भोजन की व्यवस्था आश्रम द्वारा की जायेगी। आवास एवं भोजन के मद में प्रति व्यक्ति 300 रुपए प्रति दिन देय होगा। देहरादून एवं आस–पास के व्यक्ति अपने आवास से आकर कक्षाओं में भाग ले सकते हैं।

निवेदक

विजय कुमार आर्य	**प्रेम प्रकाश शर्मा**	**अशोक कुमार वर्मा**
अध्यक्ष	सचिव	कोषाध्यक्ष
09837444469	09412051586	09412058879

सद्‌विचार

जीवन में सर्वांगपूर्ण विकास के लिए व्यक्ति को व्यवहारकुशल होना अनिवार्य है।

संस्मरण

महान दार्शनिक अरस्तु ने एक शिष्य द्वारा जीवन में उन्नति का मार्ग पूछे जाने पर पांच बातें बताईः "पहली– अपना दायरा बढ़ाओ, संकीर्ण स्वार्थपरता से आगे बढ़कर सामाजिक बनो; दूसरी– आज की उपलब्धियों पर संतोष करो और भावी प्रगति की आशा करो; तीसरी– दूसरों के दोष ढूंढने में शक्ति खर्च न करके, अपने को ऊंचा उठाने के प्रयास में लगे रहो; चौथी– कठिनाई को देखकर न चिंता करो, न निराश हो वरन् धैर्य और साहस के साथ उसके निवारण का उपाय करने में जुट जाओ; और अंतिम, पांचवी– हर किसी में अच्छाई खोजो और उससे कुछ सीखकर अपना ज्ञान और अनुभव बढ़ाओ।" इन प्रगति के पांच आधारों का पालन करने पर ही कोई व्यक्ति उन्नति के उच्च शिखर तक पहुंच सकता है।

सार

जीवन–संग्राम में सफल होने के लिए सही दिशा में किया गया प्रयास–पुरुषार्थ आवश्यक है।

(सद्‌विचार, संस्मरण और सार पुस्तक से साभार)

क्रोध से बुद्धिनाश

क्रोधाभ्द्वति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।

स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति 2।। 63।।

भावार्थः क्रोध से अत्यन्त मूढ़ता उत्पन्न हो जाती है– फिर बुद्धि काम नहीं करती और व्यक्ति भ्रम में पड़ जाता है।

व्याख्या

क्रोध से मन भ्रमित हो जाता है और क्रोधी अवस्था में व्यक्ति कुछ का कुछ कर गुजरता है और बाद में हाथ मलता हुआ पछताता है। जब बुद्धि ही काम नहीं कर रही तो फिर बचा ही क्या है– बुद्धि के नष्ट होने पर समझो कि सभी कुछ नष्ट हो गया। अतः प्रत्येक काम भावनाओं पर काबू रखते हुए बुद्धि से विचार करना चाहिए। अगर अपनी बुद्धि काम न करे तो अपने से बड़े हितेषी गुरुओं से परामर्श कर जीवन में आगे बढ़ना चाहिए।

(गीता पढ़ो आगे बढ़ो पुस्तक से साभार)

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

- TPM Certified
- ISO / TS - 16949 - 2002 Certified
- ISO - 14001 Certified
- OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्क्स
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बस बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्क्स, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है ।

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2021-2023 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

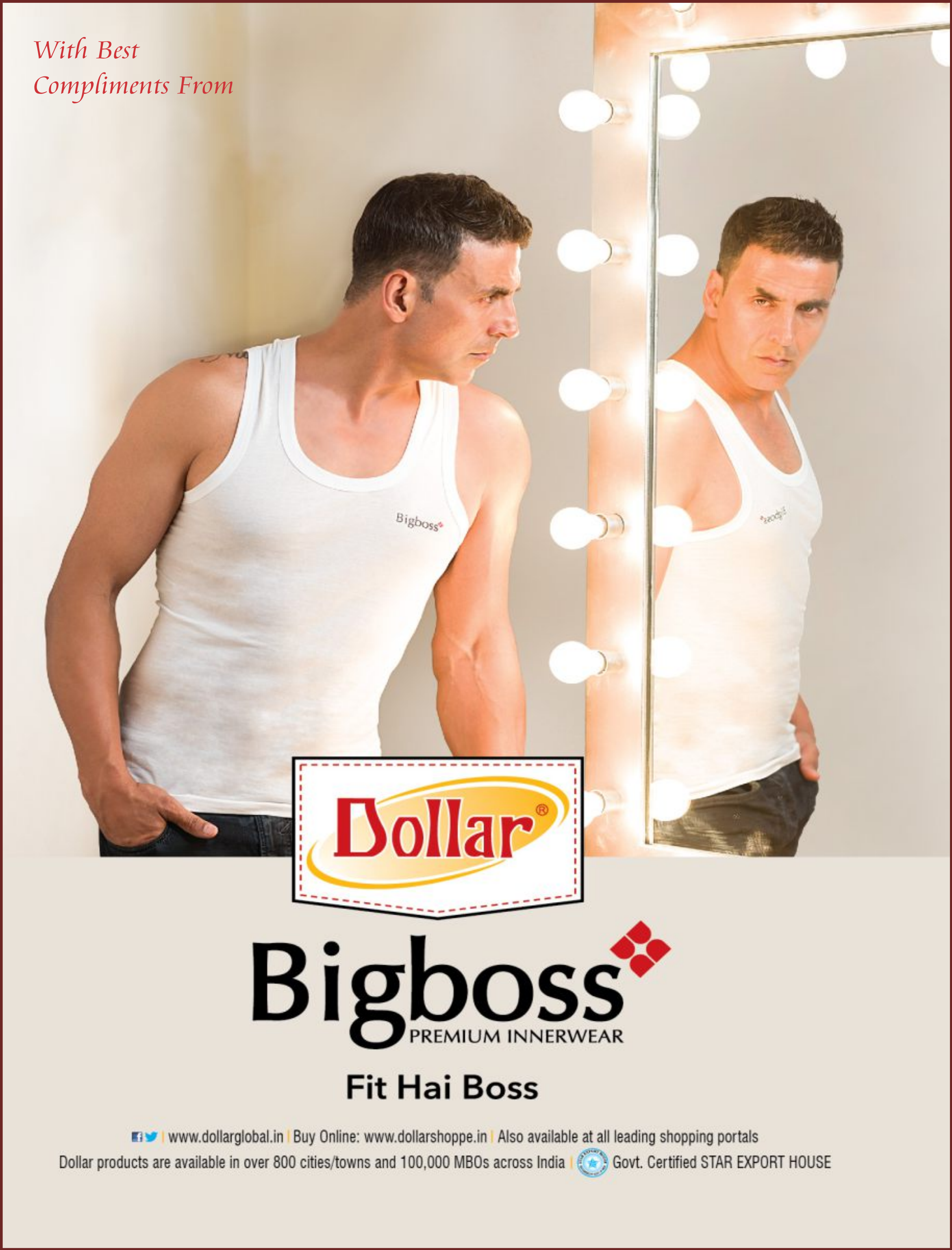

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।
संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com